तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

सचित्र मासिक पत्रिका

दिसंबर-2019 रु.5/-

श्रीहरि का पुष्पयाग.......

तिरुमल
श्री वेंकटेश्वरस्वामी के मंदिर में ०४-११-२०१९ को संपन्न उभयदेवेरियों के साथ श्रीहरि का पुष्पयाग के दृश्य

धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान्।
पुरुजित्कुन्तिभोजश्च शैब्यश्च नरपुङ्गवः॥

(- श्रीमद्भगवद्गीता १-५)

धृष्टकेतु और चेकितान तथा बलवान् काशिराज, पुरुजित्, कुन्तिभोज और मनुष्यों में श्रेष्ठ शैब्य हैं।

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्र विस्तरैः।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुख पद्माद्विनिस्सृता॥

(- गीता मकरंद, गीता का प्रभाव)

गीता का गान एवं पठन ज्यादा करना चाहिए। अन्य अनेक शास्त्रों से कया प्रयोजन? क्यों कि गीता शास्त्र स्वयं भगवान विष्णु के मुख कमल से निकला है।

(गतांक से)

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी
मोबाइल - ९४०३७२७९२७

आयिळैयार् कोङ्गै तङ्गुम्, अक्काद लळत्तळुन्दि
मायुमे न्नावियै वन्देडुत्ता निन्नु, मामलराळ्
नायक नेह्ला वुयिर्हट्कुम् नाथन् अरङ्गनेन्नुम्
तूयवन्, तीदि लिरामानुजन् तोह्लरुळ् शुरन्दे ॥४२॥

लक्ष्मीपतिः श्रीरंगनाथः सकलात्मनां शेषिभूत इत्युपदेष्टा परमपवित्रो निरवद्यो भगवान् रामानुजो विषयान्तरसंगरूपनिषव्दरमञ्जनेन विनाशोन्मुखं मां निर्हेतुककृपयाऽद्य समुद्धरतिस्म॥

सबको यह उपदेश देनेवाले, कि 'लक्ष्मीपति श्रीरंगनाथ भगवान ही सब के स्वामी हैं,' परमपवित्र ओर सकलविध दोषदूर श्रीरामानुज स्वामीजी ने अपनी निर्हेतुक कृपा से, सुंदर आभूषण पहनने वाली स्त्रीयों के ऊपर मेरी दृष्टि पडकर विनाश पानेवाली मेरी आत्मा का आज उद्धार किया।

क्रमशः

सप्तगिरि

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं
ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन,
वेङ्कटेश समो देवो
न भूतो न भविष्यति।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की
सचित्र मासिक पत्रिका

वर्ष-५० दिसंबर-२०१९ अंक-०७

विषयसूची

गीता जयंती	श्री अमोघ गौराँग दास	07
ईयुण्णि माधव पेरुमाळ्	श्रीमती नीता गोकुलजी दरक	09
श्री अरुळाळ पेरुमाल एम्पेरुमानार(श्री देवराजमुनि स्वामीजी)	श्री यतिराज झंवर	11
तिरुमंगै आळ्वार (श्री परकाल स्वामीजी)	श्रीमती उषादेवी अगर्वाल	13
श्री प्रपन्नामृतम्	श्री रघुनाथदास रान्दड	16
श्री कलिवैरिदास स्वामीजी (श्री नम्पिळ्ळै)	श्रीमती शालिनी डी.बुबना	17
तिरुप्पाणाळ्वार	श्रीमती शकुंतला उपाध्याय	21
तोंडरडिप्पोडि आळ्वार (श्री भक्तांघ्रिरेणु स्वामीजी)	श्री नरसिंग खेमका	23
श्री कूर नारायण जीयर	श्री अनुज कुमार अगर्वाल	31
श्री अळगिय मनवाळ पेरुमाळ् नायनार्	श्री गोविंद मधुसूदन रांदड	33
शरणागति मीमांसा	श्री कमलकिशोर हि. तापडिया	35
दिव्यक्षेत्र तिरुमल	श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण	37
भागवत कथा सागर ऋषभदेव का अवतार	श्री अमोग गौराँग दास	39
गोदादेवी का तिरुप्पावै और उसका तत्त्व	श्रीमती पी.सुजाता	41
श्री पिळ्ळै लोकाचार्य	श्री भवरी रघुराथ रांदड	47
श्रीविल्लिपुत्तूर	श्रीमती एन.मनोरमा	49
राशिफल	डॉ.केशव मिश्र	51

गौरव संपादक
श्री अनिलकुमार सिंघाल, आई.ए.एस.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री आर.वी.विजयकुमार, बी.ए., बी.एड्.,
उपकार्यनिर्वहणाधिकारी,
(प्रचुरण व मुद्रणालय),
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

मुखचित्र
श्री पद्मावती देवी का पुष्पयाग, तिरुचानूर।

चौथा कवर पृष्ठ
गोदादेवी के अलंकार में श्रीहरि, तिरुमल।

सूचना

मुद्रित रचनाओं में व्यक्त किये विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं। *– प्रधान संपादक*

अन्य विवरण के लिएः
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, 2264360.

website: www.tirumala.org or www.tirupati.org
वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri_helpdesk@tirumala.org

जीवन चंदा .. रु.500-00
वार्षिक चंदा .. रु.60-00
एक प्रति .. रु.05-00
विदेशियों को वार्षिक चंदा .. रु.850-00

संपादकीय

"कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्"

हिन्दू संप्रदाय में 'भगवद्गीता' कालजयी ग्रंथ है। यह सर्वकाल सर्वावस्थाओं में मार्गदर्शक ग्रंथ है। इसमें विश्वभर के सारे वास्तविक सत्य प्रस्तुत हैं। इतना ही नहीं इसका धार्मिक तत्त्व हर युग में प्रासंगिक साबित होता है। यही कारण है कि यह ग्रंथ आज भी जीवनी शक्ति से भरकर चालू है। हाँ, उपयुक्त व सच्चाई तो यह है कि भगवद्गीता का बोध कुरुक्षेत्र(युद्धभूमि) में हुआ था लेकिन वह उपदेश नित्यप्रति हमारे हृदय में होड मचाता ही है। कुरुक्षेत्र वास्तव में धर्मक्षेत्र है। श्रीकृष्ण भगवान सर्वांतर्यामी हैं, परमात्मा हैं। वे रथाश्व समान इंद्रियों पर काबू रखनेवाले परमात्मा हैं।

भारतीय आध्यात्मिक संस्कृति में श्रीकृष्ण गुरु हैं, परिपूर्णता के संकेत हैं। गुरु-शिष्य परंपरा के अनुसार श्रीकृष्ण गुरु हैं, अर्जुन शिष्य या साधक हैं। कुरुक्षेत्र में श्रीकृष्ण ने यह उपदेश दिया था कि अगर तुम इंद्रियों को अपने वश में रखोगे तो आत्मानंद की अनुभूति तुम्हें निश्चित रूप से मिलेगी। 'अक्षर गीता' हमारे चर्मचक्षुओं के सामने विद्यमान है। यह उपदेश केवल एक व्यक्ति मात्र के लिए न रहकर, संपूर्ण मानव जाति के लिए हितोपदेश है। इसीलिए आज भी 'श्रीमद्भगवद्गीता' नित्यनूतन व नित्यहरित बनकर साक्षात्कार देता है। इसका प्रयोजन हर मनुष्य के लिए आवश्यक साबित हो रहा है।

श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कुरुक्षेत्र में जिस धर्म से अवगत कराया था, वह गीतोपदेश कालजयी आत्मज्ञान का संकलन था। धर्मक्षेत्र-कुरुक्षेत्र की एक विशिष्टता है - जो भी योद्धा कुरुक्षेत्र में मृत्यु को प्राप्त होता है, वह निश्चित रूप से स्वर्ग (वीरगति) को प्राप्त करेगा। ब्रह्म ने ऐसा वर कुरुराज को दिया था।

सृष्टि के आरंभ से ही भारतवर्ष को आलंबन बनाने वाला भूग्रह इतिहास ही महाभारत है। एक लाख श्लोकों से भरा 'महाभारत' जैसा महाग्रंथ, विश्वसाहित्य में कोई दूसरा ग्रंथ नहीं है। इसके प्रणयन में कई वर्ष बीतने के बाद भी हम सभी प्राणी अपने निजीस्वरूप को उस आईने में देख सकते हैं। कुरुक्षेत्र युद्ध में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को जिस कर्म, भक्ति तथा ज्ञान योग का बोध कराया, वह अट्ठारह अध्यायों में, तीन भागों में, सात सौ श्लोकों में विभक्त हुआ दिखाई देता है। लेकिन इस महाग्रंथ का समग्र विश्लेषण पूर्णरूपेण किया हुआ नहीं लगता है।

गीता में वृत्ति-सामाजिक-आत्मा संबंधी धर्मों के निर्वहण तथा व्यक्ति की कर्त्तव्य परायणता का बोध कराया लेकिन कहीं भी तीनों तत्त्व तिरोहित होते दिखाई नहीं देते। इस कर्त्तव्य का मुखरित तत्त्व ही कर्म है। फल प्राप्ति से अधिक महत्वपूर्ण तत्व कर्म या आचरण है, यही गीता का सारांश है। हमारा जन्म केवल इस देह से संबंध नहीं रखता। देह का मतलब 'क्षर'-'नश्वर'-'अशाश्वत' है, इसलिए, यह देह उन स्थितियों का साक्षीभूत लक्षण बनकर, अतीत यानी नष्ट होना ही है। इसी को आत्मजीवन कहा जाता है।

आत्मा के लक्षण या परिभाषा है - 'अक्षर'-'अनश्वर'-'शाश्वत'-'अमृत'। पुनःपुनः जन्म तो माया का एकवलय है, चक्र है। इस नश्वर, मायावी लौकिक दृश्य जगत से योग ध्यानादि उपायों के द्वारा अतीन्द्रियता को प्राप्त करने का पथप्रदर्शन कराना ही गीता का सारांश है। गुरु शिष्य के संवादों के माध्यम से चैतन्य स्थिति के रहस्यों का उद्घाटन गीता स्पष्ट करता है। इस 'खगोल कर्त्तव्य' का बोध श्रीकृष्ण ने अकेले अर्जुन को नहीं कराया, बल्कि गीता प्रतिभा का बोध हर व्यक्ति के लिए कराया है। गीता, हर प्राणी को निष्काम कर्म सिद्धांत को अवगत कराके, समस्त कर्म करने के बाद भी उसके वल्य में फँसने से अपने को बचाने का मार्ग गीता सुझाती है। गीता समस्त उपनिषदों का सार है, योगशास्त्र, धर्मशास्त्र, कर्मशास्त्र तथा ज्ञानशास्त्र है। अर्जुन के द्वारा समस्त विश्व को आनंदप्राप्ति के लिए गूढ़गर्भित रहस्य का उद्घाटन इस ग्रंथराज के माध्यम से होता है। गीतोपदेश करके श्रीकृष्ण जगद्गुरु बना। आशा करते हैं कि गीता के आविर्भाव की पुण्यतिथि को याद करके हर भारतवासी पर्वदिन मनायेंगे तथा समस्त सुख तथा शांति पायेंगे।

भगवद्गीता और नौजवान

गीता जयंती

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवाँघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

मोबाइल - ९८२१९१४६४२

गीता जयंती महा-महोत्सव इस वर्ष ८ दिसंबर को मनाया जायेगा। कई सदियों से एक पुस्तक के प्राकट्य दिवस का उत्सव मनाना विश्व भर के बुद्धिमान व्यक्तियों का भगवद्गीता के प्रति एक अनूठा सम्मान है। सम्मान का एसा अविश्वसनीय स्थान केवल भगवद्गीता को ही प्राप्त है। वास्तव में 'गीता' भगवान के उपदेशों का रूप है। पृथ्वी पर भगवद्गीता का प्राकट्य विजय, समृद्धि, असाधारण शक्ति एवं नैतिकता प्रदान करने के लिए हुआ। किसी व्यक्ति को इस अद्भुत् सत्य का ज्ञान होने पर उसका गीता के प्रति लगाव चरम सीमा पर पहुँच जायेगा। तब वह उसके जीवन का सर्वोत्तम पल होगा। संपूर्ण जगत के सभी लोग जीवन में केवल सफल होने की कामना करते हैं, पराजय या असफलता किसी को भी नहीं चाहिए। किन्तु संपूर्ण विश्व के इतिहास में केवल अर्जुन ने पराजय एवं असफलता का चयन किया। अर्जुन ने कहा था कि ''मुझे विजय एवं राज्य के सुख को पाने की कोई इच्छा नहीं है।'' लेकिन वही अर्जुन गीता के श्रवण एवं गीता के उपदेशों के अनुसार कार्य करने के पश्चात असीमित सफलता प्राप्त करके सदैव के लिए यशस्वी एवं सुप्रसिद्ध हो गये। अर्थात किसी व्यक्ति को सफलता मिलने का विश्वास न होने पर या सफलता पाने की इच्छा न होने पर भी ध्यान पूर्वक भगवद्गीता का अनुसरण करने से उसे सभी कार्यों में सफलता अवश्य प्राप्त होगी। एसी है गीता-शक्ति। अतः संपूर्ण मानवता के लिए यह अद्वितीय संदेश है कि गीतोपदेश के अनुसार कार्य करने वाले व्यक्ति को सभी परिस्थितियों में सदैव ही विजय प्राप्त होगी। गीता का अनुसरण करने वाले व्यक्ति को जीवन में सफलता मिलने के साथ ही जीवन में असंदिग्ध रूप से विजय प्राप्ति का विश्वास भी हो जाता है। गीता एक सच्चे अनुयायी में एसा विश्वास जगाती है। यह है गीता-शक्ति। पृथ्वी पर इसका अवतरण सभी को केवल सफलता प्रदान करने के लिए ही हुआ।

विद्यार्थियों एवं नौजवानों को यह ज्ञात होने पर, कि वास्तव में गीता किस प्रकार जीवन को सफलता से पुरस्कृत करती है, वे गीता के सच्चे प्रशंसक बन जाते हैं। गीता से लगाव होने पर पहले मन का भ्रम निकल जाता है। भ्रम के कारण लोग वास्तविक कार्य को भूलकर व्यर्थ की चीजों में व्यस्त रहते हैं। यद्धपि अर्जुन युद्धभूमि में शत्रुओं से युद्ध करने के लिए आया था, लेकिन उस कार्य को भूलकर उसने सन्यास लेना निश्चित किया। इसी को भ्रम कहते हैं। विद्यार्थियों एवं नौजवानों के लिए केवल अध्ययन पर ध्यान केन्द्रित करना ही उनका वास्तविक कार्य है। लेकिन यदि

उनका ध्यान अवाँछित एवं व्यर्थ चीजों की ओर मुड़ जाये तो वह भ्रम का संकेत है। अधिकतर वर्तमान नौजवान इस भ्रम के शिकार लगते हैं। हम कह सकते हैं कि ८०% युवा पीढ़ी इस खतरनाक भ्रम से ग्रसित है। लेकिन भगवद्गीता का बारीकी से अध्ययन करने एवं उसके उपदेशों का पालन करने से एसे सभी भ्रम मिट जाते हैं और वास्तविक कार्य की स्मृति वापस मिलती है। इसका अर्थ है कि गीता के अध्ययन से नौजवानों को अपने अध्ययन के मुख्य कार्य का अहसास होता है। परिणाम स्वरूप उनका मन संतुलित एवं स्थिर हो जाता है। इससे संदेहों से मुक्त होने की एक अन्य अद्भुत् अवस्था प्राप्त होती है। संदेह भूतों या राक्षसों की भाँति निरन्तर विक्षुब्ध करते हुए ध्यान एवं क्रियाशीलता को प्रभावित करते हैं। संदेहों के नष्ट होने का अगला कदम है मुख्य कार्य को कार्यान्वित करने में जुट जाना। गीता का संदेश सुनने के बाद अर्जुन ने कहा ''करिष्ये वचनं तव - मैं आप के आदेशों को कार्यान्वित करुँगा''।

सच्चाई से प्रयत्न करने वाले व्यक्ति के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। लेकिन गीता के ज्ञान से संपन्न व्यक्तियों में लगातार प्रयत्न करने का स्वभाव उत्पन्न होना संभव हो जाता है। पृथ्वी पर भगवद्गीता का अवतरण सभी मनुष्यों को हर परिस्थिति में कर्तव्य परायण बनाने के लिए ही हुआ। गीता के प्रशंसक बन जाने पर नौजवान जीवन के सभी क्षेत्रों में विजयी होते हैं। गीता जयंती का उत्सव मनाने की प्रथा भारत के सभी प्रांतों में प्रचलित है। इसलिए सभी विद्यार्थियों एवं नौजवानों को इस वर्ष से गीता जयंती के उत्सव में भाग लेने का प्रयत्न अवश्य करना चाहिए। वह उनके जीवन में महान विजय, महान समृद्धि, महान आनंद एवं महान नैतिकता प्राप्त करने की ओर अग्रसर होने का पहला कदम होगा। भगवद्गीता के आशीर्वाद से स्वयम् को सदैव विजयी बनने दो।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

लेखक लेखिकाओं से निवेदन

सप्तगिरि पत्रिका में प्रकाशन के लिए लेख, कविता, रचनाओं को भेजनेवाले महोदय निम्नलिखित विषयों पर ध्यान दें।

१. लेख, कविता, रचना, अध्यात्म, दैव मंदिर, भक्ति साहित्य विषयों से संबंधित हों।

२. कागज के एक ही ओर लिखना होगा। अक्षरों को स्पष्ट व साफ लिखिए या टैप करके मूलप्रति डाक या ई-मेइल (hindisubeditor@gmail.com) से भेजें।

३. किसी विशिष्ट त्यौहार से संबंधित रचनायें प्रकाशन के लिए ३ महीने के पहले ही हमारे कार्यालय में पहुँचा दें।

४. रचना के साथ लेखक धृवीकरण पत्र भी भेजना जरूरी है। 'यह रचना मौलिक है तथा किसी अन्य पत्रिका में मुद्रित नहीं है।'

५. रचनाओं को मुद्रित करने का अंतिम निर्णय प्रधान संपादक कार्य होगा। इसके बारे में कोई उत्तर प्रत्युत्तर नहीं किया जा सकता है।

६. मुद्रित रचना के लिए परिश्रमिक (Remuneration) भेजा जाता है। इसके लिए लेखक-लेखिकाएँ अपना बैंक प्रथम पृष्ठ जिराक्स (Bank name, Account number, IFSC Code) रचना के साथ जोड करके भेजना अनिवार्य है।

७. धारावाहिक लेखों (Serial article) का भी प्रकाशन किया जाता है। अपनी रचनाओं का भेजनेवाला पता- **प्रधान संपादक,**
सप्तगिरि कार्यालय,
ति.ति.दे.प्रेस कांपौन्ड, के.टी.रोड,
तिरुपति – ५१७ ५०७. चित्तूर जिला।

ईयुण्णि माधव पेरुमाळ्

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. ९ दिसंबर २०१९

- श्रीमती नीता गोकुलजी दरक
मोबाइल - ९८४४३३५८५८

तिरुनक्षत्र - कार्तिक मास, भरणी नक्षत्र

अवतार स्थल - श्रीरंगम्

आचार्य - श्री कलिवैरिदास स्वामीजी

शिष्यगण - ईयुण्णि पद्मनाभ पेरुमाळ् (उनके पुत्र)

ईयुण्णि माधव पेरुमाळ् श्री कलिवैरिदास स्वामीजी के प्रिय शिष्य थे। उन्हें सिरियाळवान् अप्पिळ्ळै नाम से भी जाना जाता है। तिरुवायमोळि का ईडु महा व्याख्यान उन्हीं के माध्यम से श्री वरवर मुनि स्वामीजी के पास पहुँचा।

तमिल में ''ईथल'' का अर्थ है परोपकार। ''उन्नुथल'' का अर्थ है भोजन करना। ईयुण्णि का अर्थ है - वह जो बड़े परोपकारी है, जो अन्य श्रीवैष्णवों को भोजन कराने पर ही स्वयं भोजन करता है।

श्री कलिवैरिदास स्वामीजी भगवत विषय के कालक्षेप में निरंतर लगे हुए थे। वह श्रीरंगम् में श्रीवैष्णव संप्रदाय का सुनहरा समय था, जब सभी जन श्री कलिवैरिदास स्वामीजी के माध्यम से भगवत अनुभव में सराबोर हो रहे थे। भगवान और अपने आचार्य श्री वेदांती स्वामीजी की दिव्य कृपा से श्री कलिवैरिदास स्वामीजी एक श्रेष्ठ बुध्दिजीवी थे, जो दक्षता से मुख्यतः श्री रामायण और अन्य पुराण/इतिहासिक घटनाओं के उदाहरण के माध्यम से उन सुंदर सिध्दांतों की व्याख्या करने में सक्षम थे जो आल्वारों के पाशुरों में दर्शाये गये हैं।

वडुक्कु तिरुवीधि पिळ्ळै, नम्पिळ्ळै के प्रिय शिष्य थे। दिन में श्री कलिवैरिदास स्वामीजी से तिरुवायमोळि के कालक्षेप सुनकर वे रात में उसे नियमित रूप से लिख लिया करते थे। व्याख्यान श्रृंखला के पूर्ण होने पर एक बार श्री कलिवैरिदास स्वामीजी वडुक्कु तिरुवीधि पिळ्ळै के निवास पर जाते हैं और उनके द्वारा तिरुवायमोळि के कालक्षेप में कहे गये शब्दों को वहाँ ताड़ के पत्तों पर लिखा हुआ देखते हैं। वे उसे पूरा पढ़ते हैं और जिस सटीकता से सभी तत्त्वों को लिखा गया था, उस शैली से बहुत प्रसन्न होते हैं। तथापि उनकी आज्ञा के बिना उसे लिखने पर वे वडुक्कु तिरुवीधि पिळ्ळै से नाराज होते हैं। वे अपनी असहमति दर्शाते हैं पर अंततः वडुक्कु तिरुवीधि पिळ्ळै के महान समर्पण भाव से आश्वस्त होते हैं। तिरुवायमोळि का यह व्याख्यान ''ईडु ३६००० पद'' के नाम से प्रसिद्ध है। वे उन ताड़ के पत्तों को ईयुण्णि माधव पेरुमाळ् को सौंप देते हैं और उन्हें अपने शिष्यों को उसे सिखाने को कहते हैं।

ईयुण्णि माधव पेरुमाळ् अपने पुत्र ईयुण्णि पद्मनाभ पेरुमाळ् को यह सिखाते हैं। ईयुण्णि पद्मनाभ पेरुमाळ् का जन्म नक्षत्र स्वाति है। ईयुण्णि पद्मनाभ पेरुमाळ् इसे अपने प्रिय शिष्य नालूर् पिळ्ळै को सिखाते हैं।

श्री वरवर मुनि स्वामीजी ने अपने उपदेश-रत्नमाला में ईडु व्याख्यान के हस्तांतरण को ४८ और ४९ पाशुर के माध्यम से सुंदरता से समझाया है।

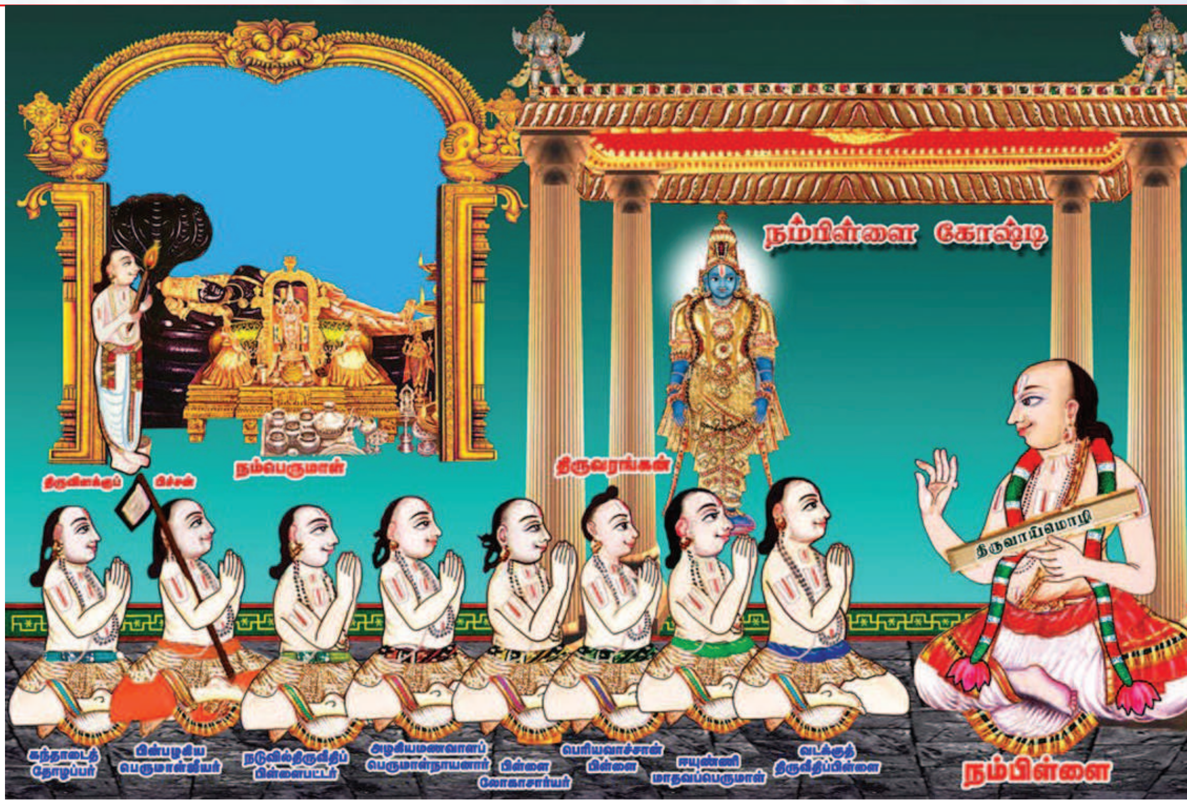

१) ४८वें पाशुर में वे कहते हैं, वडुक्कू तिरुवीधि पिळ्ळै ने ईडु ३६००० पद व्याख्यान की रचना की और नम्पिळ्ळै ने उसे उनसे लेकर, ईयुण्णि माधव पेरुमाळ् को सौंप दिया।

२) ४९वें पाशुर में वे कहते हैं ईयुण्णि माधव पेरुमाळ् से उनके पुत्र ईयुण्णि पद्मनाभ पेरुमाळ् ने उसका अध्ययन किया और फिर वह नालूर् पिळ्ळै और नालूर् आच्चान् पिळ्ळै को हस्तांतरित हो गया। तत्पश्चात् उसे तिरुवायमोळि पिळ्ळै, तिरुनारायणपुरातू आय आदि को सिखाया गया।

३) इस तरह हमने ईयुण्णि माधव पेरुमाळ् के गौरवशाली जीवन की कुछ झलक देखी। वे एक महान विद्वान थे और नम्पिळ्ळै के बहुत प्रिय थे। हम सब उनके श्रीचरण कमलों में प्रार्थना करते हैं कि हम दासों को भी उनकी अंश मात्र भागवत निष्ठा की प्राप्ति हो। इस अभिलेख में हमने देखा कैसे ईडु व्याख्यान श्री कलिवैरिदास स्वामीजी से हस्तांतरित होते हुए श्री वरवर मुनि स्वामीजी तक पहुँचा।

ईयुण्णि माधव पेरुमाळ् का तनियन

लोकाचार्य पदाम्भोज समश्रयम् करुणाम्बुधिम्।
वेदांत द्वय संपन्नम् माधवार्यम् अहम् भजे।।

ईयुण्णि पद्मनाभ पेरुमाळ् का तनियन

माधवाचार्य सत्पुत्रं तत्पादकमलाश्रितम।
वात्सल्यादी गुणैर्युक्तं पद्मनाभ गुरुम् भजे।।

नालूर् पिळ्ळै का तनियन

चतुर्ग्राम कुलोद्भूतं द्राविड़ ब्रह्म वेदिनं।
यज्ञार्य वंशतिलकं श्रीवराहमहं भजे।।

नालूर् आच्चान् पिळ्ळै की तनियन

नमोस्तु देवराजार्य चतुर्ग्राम निवासिने।
रामानुजार्य दासस्य सुताय गुणशालिने।।

श्री अरुळाळ पेरुमाल एम्पेरुमानार

(श्री देवराजमुनि स्वामीजी)

- श्री यतिराज झंवर
मोबाइल - ७५८८८७६४३३

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. ९ दिसंबर २०१९

तिरुनक्षत्र - भरणी नक्षत्र, कार्तिक मास

अवतार स्थान - विन्जिमूर

आचार्य - श्रीरामानुजस्वामीजी

शिष्य - अनन्ताळवान, एच्चान, तोण्डनूर नम्बि, मरुदूर नम्बि आदी

कार्य - ज्ञान सारम, प्रमेय सारम्

अरुळाळ पेरुमाल एम्पेरुमानार का जन्म आन्ध्र प्रदेश के विन्जिमूर में हुआ। पूर्व में उनका नाम यग्य मूर्ति था और वे अव्दैति थे। एक बार वे गंगा स्नान के लिये निकले थे और वहाँ कई विद्वानों को हराये और मायावाद सन्यासी बन गये। उनके अपार शस्त्र विध्या के कारण वे प्रख्यात हुए और कई लोग उनके शिष्य हुए। श्रीरामानुजस्वामीजी के कीर्ति के बारे में सुन कर यग्य मूर्ति उनसे वाद विवाद करना चाहते थे। वे कई ग्रन्थ कि तयारी करके उनके शिष्यों के साथ श्रीरामानुजस्वामीजी से मिलने के लिए श्रीरंगम् आये।

श्रीरामानुजस्वामीजी उनका स्वागत किये और १८ दिन वाद विवाद के लिए तैयारी किये। यग्यमूर्ति ने घोषित किया कि यदी उनकी हार हुई तो वे अपने नाम को श्रीरामानुजस्वामीजी के दर्शन के नाम में बदलेंगे और श्रीरामानुजस्वामीजी के पादुकों को सिर पर ले जायेंगे। श्रीरामानुजस्वामीजी ने पराजय होने पर ग्रन्थों को न छूने का प्रतिज्ञा किया।

वाद विवाद प्रारम्भ हुआ और १६ दिन हो गये। दोनों बहुत तेज और अर्थपूर्ण ढंग से विवाद कर रहे थे जैसे दो हाथी एक दूसरे से लड रहे थे। १७वें दिन ऐसा लग रहा था कि यग्य मूर्ति मजबूत स्थिति में हैं। श्रीरामानुजस्वामीजी तनिक चिंतित हुए और अंत में अपने आश्रम लौट गये। उस रात उन्होने भगवान से प्रार्थना किए कि, यदी वे हार गये तो श्री शठकोप स्वामीजी से स्थापित और श्री यामुनाचार्य स्वामीजी से बढाया हुआ उत्तम सांप्रदाय समाप्त हो जायेगा। और वह पतन उनसे होगा वह उनको बहुत दु:ख हुआ। भगवान श्रीरामानुजस्वामीजी के स्वप्न में प्रत्यक्ष हुए और निश्चिन्त रहने को बोले। ये सब श्रीरामानुजस्वामीजी को एक चतुर और बुद्धिमान् शिष्य ले आने के लिये उनके दिव्य लीला है। और श्रीरामानुजस्वामीजी को श्री यामुनाचार्य स्वामीजी के मायावद के खण्डन को उपयोग करने का सूचना दिये। इससे श्रीरामानुजस्वामीजी भगवान के महत्व को समझकर खुश हुए और सुबह तक एम्पेरुमान का नामस्मरण किये, फिर नित्यानुष्टान् और तिरुवाराधनम् कर वाद विवाद के अन्तिम दिन के लिये आये। यग्यमूर्ति प्रज्ञावान होने के कारण श्रीरामानुजस्वामीजी के तेजस को सही अर्थ में समझे और श्रीरामानुजस्वामीजी के दिव्य कमल चरणों में प्रर्थना किये और उनके पादुकों को अपने सिर पर रख कर, अपने हार को मान लिये। जब श्रीरामानुजस्वामीजी ने उनसे विवाद करने के लिये पूछे तो, तब यग्यमूर्ति ने बोले ''एम्पेरुमानार और पेरियपेरुमाल (श्रीरंगनाथ) दोनों अपने दृष्टि में एक है, इसलिये तर्क कि आवश्यकता नहीं हैं।'' पर श्रीरामानुजस्वामीजी ने अपने अपार कृपा से एम्पेरुमान के सगुणत्वम को ओचितपूर्ण प्रमाणों से स्पष्ट किये। यग्यमूर्ति ने श्रीरामानुजस्वामीजी से फिर सही मार्ग

में सन्यास देने के लिये प्रार्थना की। श्रीरामानुजस्वामीजी ने उनको पहले शिका और यज्ञोपवितम को त्याग करने का प्रायश्चित करने के लिये कहा (क्योंकी वे पहले मायावादि सन्यासि थे)। फिर श्रीरामानुजस्वामीजी ने यग्यमूर्ति को त्रिदण्डम्, काषायम् आदी देते हैं। पेररुळाळन् की सहायता के याद में और श्रीरामानुजस्वामीजी के नाम लेने का इच्छा को पूरी करने के लिये उनको 'अरुळाळ पेरुमाळ एम्पेरुमानार' नाम दिये। एम्पेरुमानार अरुळाळ पेरुमाळ श्रीरामानुजस्वामीजी को नम्पेरुमाळ और अपने तिरुवाराधन पेरुमाळ के पास रखकर नित्य पूजा करते हैं। ये सब एम्पेरुमानार और अरुळाळ पेरुमाळ को सम्बध करने के लिये एम्पेरुमान के दिव्य लील को दिखाने के लिये ले गये थे।

श्रीरामानुजस्वामीजी ने अरुळिचेयल (दिव्य प्रबन्ध) और उनके अर्थों को अरुळाळ पेरुमाळ एम्पेरुमानार को सिखाये। जब अनन्ताळवान, एच्चान आदी श्रीरामानुजस्वामीजी के शिष्य बनने के लिये श्रीरंगम् पहुँचे थे, तब श्रीरामानुजस्वामीजी ने उनको अरुळाळ पेरुमाळ एम्पेरुमानार के पास पंच संस्कार लेने की सूचना दी। अरुळाळ पेरुमाळ एम्पेरुमानार अपने शिष्यों को निर्देश किये कि हमेशा सिर्फ श्रीरामानुजस्वामीजी में चित्त लगाना ही उपाय है।

अरुळाळ पेरुमाळ एम्पेरुमानार को श्रीरामानुजस्वामीजी के प्रति विशेष कैंकर्य श्रीरामानुजस्वामीजी के आराधन भगवान का तिरुवाराधन करना ही था। एक बार दो श्रीवैष्णव यात्रियों ने श्रीरंगम् के गलि में किसी को श्रीरामानुजस्वामीजी के आश्रम के बारे में पूछ रहे थे। तब एक स्थानिक ने जवाब में पूछा ''किस एम्पेरुमानार के आश्रम?''। इसको सुन कर वो श्रीवैष्णवों ने पूछा, ''क्या हमारे सांप्रदाय में दो एम्पेरुमानार है?'' स्थानिक ने बोला ''हाँ, एम्पेरुमानार् और अरुळाळ पेरुमाळ एम्पेरुमानार हैं''। अन्त में श्रीवैष्णवों ने बोला, ''हम उडयवर के आश्रम के बारे में पूछ रहे हैं'' और स्थानिक ने उनको आश्रम दिखाया। उस सम्वाद के समय अरुळाळ पेरुमाळ एम्पेरुमानार वहाँ थे और उन बातों को सुनकर वे दुःखित हुए और सोचे वो एम्पेरुमानार के नाम में अलग कुटिल में रहना ही इस संवाद का कारण है। तुरन्त वे अपने आश्रम को विध्वंस करके, एम्पेरुमानार के पास गये और उनको वो संवाद के बारे में बोलकर, एम्पेरुमानार के साथ ही रहने के लिये अनुमति माँगा। एम्पेरुमानार उनको वहाँ रहने कि अनुमति दिये और सभी रहस्य अर्थों को सिखाया।

अरुळाळ पेरुमाळ एम्पेरुमानार, अपनी अपार करुणा से दो प्रबन्ध तमिळ में लिखे। वे ज्ञान सारम और प्रमेय सारम। ये दो प्रबन्ध हमारे सांप्रदाय के दिव्य और सुन्दर अर्थों को, विशेष में आचार्य के वैभव को अत्यन्त सुन्दर रूप में बताते है। श्री पिळ्ळै लोकाचार्य स्वामीजी के श्रीवचन भूषणम् अरुळाळ पेरुमाळ एम्पेरुमानार के प्रबन्धों के विचारों को अनुकरण करते हैं। श्री वरवर मुनि स्वामीजी ने इन प्रबन्धों के सुन्दर व्याख्यान दिये थे।

अरुळाळ पेरुमाळ एम्पेरुमानार के तनियन

रामानुजार्य सच्छिष्यम् वेदासास्त्रार्त सम्पदम।
चतुर्ताश्रम सम्पन्नम् देवराज मुनिम् भजे।।

तिरुमंगै आळवार
(श्री परकाल स्वामीजी)

- श्रीमती उषादेवी अगर्वाल
मोबाइल - ९९०३३८८००५

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. १० दिसंबर २०१९

तिरुनक्षत्र - कार्तिक मास - कृत्तिका नक्षत्र

अवतार स्थल - तिरुक्कुरैयलूर्

आचार्य - श्री विष्वक्सेन, तिरुनरयूर नम्बी, तिरुकण्णपुरं शौरिराज पेरुमाळ

ग्रंथ रचना सूची - पेरियतिरुमोळि, तिरुक्कुरुदाण्डकम, तिरुवेळुकूत्तिरुक्कै, शिरिय तिरुमडल, पेरिय तिरुमडल और तिरुनेदुंताण्डकम

परमपद प्रस्थान प्रदेश - तिरुक्कुरुंगुडि

शिष्यगण - अपने साले इळयाल्वार, परकाल शिष्यर, नीर्मेल नडप्पान (पानी पर चलने वाले), तालूदुवान (ताला को मुँह से फूँक के खोलने वाले), तोळा वळक्कन (झगड़कर धन को हासिल करने वाले), निललिळ ओदुन्गुवान (परछाई में सिमट जाने वाले), निळलिल मरैवान, उयरत तोंगुवान (सीमा रहित ऊंचाईयों को भी चढने वाले)।

श्री परकाल स्वामीजी की तनियन

वृश्चिके कृत्तिका जातं चतुष्कवि शिखामणिम्।
षट् प्रबन्ध कृतं क्षार्ङ्ग मूर्ति कलिघ्नमाश्रये।।
कलयामि कालिध्वंसं कविलोक दिवाकरम्।
यस्य गोभिः प्रकाशाभिराविद्यं निहतं तमः।।

वृश्चिक मास में कृत्तिका नक्षत्र के दिन भगवान के शार्ङ्ग धनुष के रूप में परकाल सूरी का अवतार हुआ। पेरियवाच्छान पिळ्ळै अपने ग्रंथ के अवतारिका में श्री परकाल स्वामीजी की वैभवता को दर्शाते हुए कहते हैं भगवान अपने निर्हेतुक कृपा से आळवार को संस्करण किए हैं और उनके द्वारा अनेक जीवात्मा उज्जीवित हुए हैं।

श्री परकाल स्वामीजी आँखों को आह्लाद करने विषयान्तरों में बहुत ही दिलचस्पि रखते थे, भगवान ने उन सभी विषयों से उनका ध्यान हटाकर कई दिव्यदेशों पे और आँखों को लुभाने वाली अपनी अर्चावतार एम्पेरुमान् की ओर मोड़ देते हैं और उन्हीं में ध्यान मग्न कर देते हैं और इतना परिपूर्ण अनुभव प्रदान करते हैं की आळवार को भगवान से पल भर की जुदाई भी असहनीय हो जाती हैं। तदनन्तर श्रीभगवान आळवार को इस भौतिक संसार में रहने के बावजूद उन्हें नित्यमुक्तों के बराबर की स्थिति को पहुँचा देते हैं और परमपद प्राप्त करने की चाह प्रवृद्ध करते हैं और अन्त में परमपद प्रदान करते हैं।

श्री वरवरमुनि स्वामीजी तिरुवाली तिरुनगरी दिव्यदेशों की यात्रा करते समय आळवार की दिव्य मंगल तिरुमेनी (शरीर) के सौंदर्य पर इतने आकर्षित हुए की उसी वक्त आळवार के रमणीय रूप को अपने आँखों के सामने दर्शाते हुए एक पाशुर रचते हैं। जिसका अर्थ यह हैं -

परकालन / मंगै मन्नन का दिव्य मंगल विग्रह हमेशा मेरे हृदय में हैं। यह दिव्य रूप को दर्शाते हैं की कंधों के बल एक भाला, एम्पेरुमान को अंजलि समर्पित करते हुए श्रीहस्त, अति सुन्दर ऊर्ध्वपुण्ड्र, प्रणव उच्चारण करते होठ, सीधी और थोड़ी सी ऊपर उठी नासिकाग्र, शीतल मुखमण्डल, विशाल नेत्र, घुंगराले सुन्दर काले बाल, थोड़े से झुके हुए कान (एम्पेरुमान से अष्टाक्षर

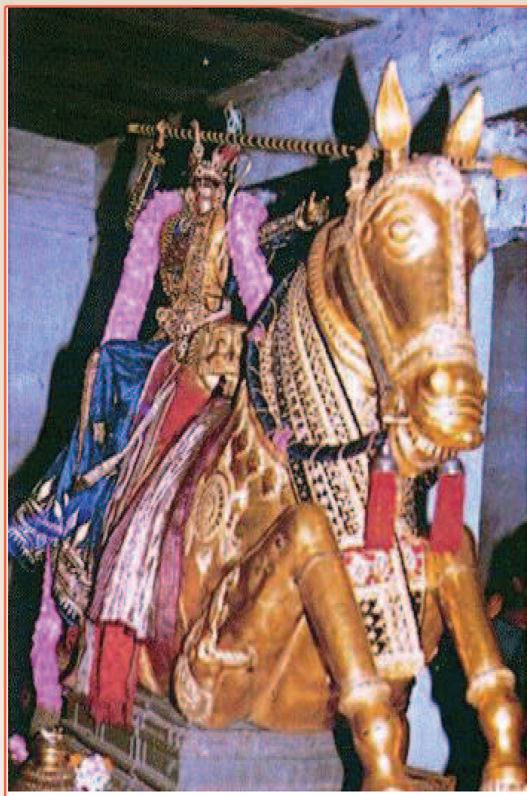

महामंत्र सुनने के लिए), गोलाकार गर्दन, विशाल वक्षस्थल, बलिष्ट बाहु, सुंदर सी पीठ का ऊपरी भाग, पतली कटी प्रदेश, मनमोहक पुष्पमाला, अद्भुत नूपुर, आळवार के पराक्रम को सूचित करने वाले घुटने, थोडे से मुड़े हुए श्रीचरण कमल और शत्रुओं का नाश करने वाली कद्र। हम यह निश्चित रूप से कह सकते हैं की तिरुवाली - तिरुनगरी के कलियन की अर्चा विग्रह यह सृष्टि में सबसे सुन्दर हैं।

श्री परकाल स्वामीजी निम्न लिखित तिरु नामों से भी जाने जाते हैं -

परकालन (अन्य मत को काल (यम) के समान खण्डन करने वाले), कलियन (काल के बराबर), नील (नील वर्ण का देह), कली ध्वंस (कली को ध्वंस करने वाले), कविं लोक दिवाकर (कवि लोक के सूर्य) चतुष्कवि शिखामणि (चार तरह की कविता में विद्वान), षट प्रबंध कवि (छह प्रबंधों के कृपा कारक), नालु कवि पेरुमाळ, तिरुवाविरुडय पेरुमान (महान कदृग धारण), मंगैयर कोन (मंगै राष्ट्र के राजा), अरुळ मारी (वर्ष काल की वर्ष के समान कृपा बरसाने वाले), मंगै वेन्दन (मंगै राष्ट्र के अधिकारी), आलीनाडॉन (आडल मा नामक अश्व अधिकारी), अरट्ट्मुक्की, अडयार सीयम (अन्य मतो को निकट पहुँचने न देने वाले सिंह), कोंगु मालार्क कुळलियर वेळ, कोर्चा वेन्दन (महान राजा), कोरवेळ मंगै वेन्दन (कुछ भी कमी न रखने वाले महाराजा)।

श्री परकाल स्वामीजी कार्मुक (कुमुद गण) अंश से तिरुक्कुरैयलूर् में (तिरुवालि - तिरुनगरि के समीप) चतुर्थ वर्ण में अवतरित हुए। जैसे दिव्यसूरि चरित में गरुड़ वाहन पंडित बताते हैं उनका ''नीलन'' (श्याम देह वर्ण) ऐसे नामकरण किया गया हैं। आपकी बाल्य अवस्था बिना कुछ भगवत सम्बन्ध से ही बीत गई। यौवन अवस्था प्राप्त करने पर, भौतिक विषयों में उलझ गए। बलिष्ट शरीर और अनेकानेक आयुध प्रयोग करने में कुशलता सहित युद्ध विद्या में निपुण होने के कारण चोल देश के राजा के पास जाते हैं और अपनी सेना में उन्हें स्थान देने की माँग करते हैं। चोल देश का राजा उनकी सामर्थ्य को देखकर उन्हें सैन्याध्यक्ष के स्थान पर नियुक्त करते हैं और एक छोटी प्रान्त का पालन आभार सौंप देते हैं। अचानक तिरुवाली दिव्यदेश में स्थित सुन्दर सरोवर में अप्सराये (देव लोक के नृत्यांगनाएं) जल विहार करने के लिये आती हैं। उनमें से तिरुमामगल (कुमुदवल्ली) नामक एक कन्या पुष्प संचयन (फूलों की संग्रह) करने के लिए निकलती हैं और उनकी सखियाँ उन्हें भूलकर चली जाती हैं। जब वह कन्या मनुष्य शरीर लेकर सहायता के लिए ढूँढती हैं उस समय एक वैध्य उस कन्या को खुशी से घर ले आते हैं और अपनी पत्नी से परिचित कराते हैं और निसंतान दम्पती बहुत प्रसन्न होकर कन्या को अपना लेते हैं और प्यार से परवरीश करते हैं। उनकी सुन्दरता देखकर कुछ लोग नीलन को इस कन्या के बारे में बताते हैं और नीलन उनके सौंदर्य पर मुग्ध होते हैं और तुरन्त उनके सामने अपने विवाह का प्रस्ताव रखते हैं और ढ़ेर सारा धन उन्हें देते हैं। वैध्य दम्पती प्रस्ताव को मंजूर करते हैं लेकिन कुमुदवल्ली शर्त रखती हैं की वे एक श्रीवैष्णव जो आचार्य से पंच संस्कार प्रदित हो केवल उन्ही से विवाह रचेंगी। जैसे बताते हैं एक होशियार व्यक्ति अच्छे काम करने में देरी नहीं करता हैं, उसी तरह वे तिरुनरैयूर नम्बि के पास पहुँचकर, पंच संस्कार करने की विनती करते हैं। एम्पेरुमान अपने दिव्य करुणा से उन्हें शंख चक्र प्रदान कर तिरुमंत्र का उपदेश करते हैं।

तत्पश्चात आळवार द्वादश ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करते हैं और कुमुदवल्ली से अपने विवाह का प्रस्ताव रखते है। कुमुदवल्ली विवाह के लिए सहमत होती हैं परन्तु कहती हैं की उन्हें पति तब ही मानेंगी जब आप श्री एक साल प्रति दिन १००८ श्रीवैष्णवों को तदियाराधन करायेंगे। कुमुदवल्ली के प्रति अनुराग के कारण आळवार उनका कहना मान लेते हैं और अति वैभव से कुमुदवल्ली से विवाह समारोह आयोजित होता हैं।

अन्य देवताओं के आराधन से श्री विष्णु आराधन श्रेष्ठ हैं और विष्णु भक्तों का आराधन स्वयं श्री महाविष्णु से भी अधिक हैं।

इस प्रमाण के अनुगमन करते हुए आळ्वार अपनी पूरी संपत्ति लगाकर श्रीवैष्णवों को तदीयाराधन कराते हैं। यह देखकर कुछ लोग, राजा के पास शिकायत करते हैं की श्री परकाल स्वामीजी प्रजा का धन श्रीवैष्णवों की तदीयाराधन करने में दुरुपयोग कर रहा है। लोगों की बात सुनकर राजा सैन्याध्यक्ष को आदेश देते हैं की पूरी सेना के साथ परकालन को निर्बंध करें। वह सैन्याध्यक्ष पूरी सेना के साथ एक बड़ी सेना लाता है और आळ्वार पर हमला करता है। तब परकालन धैर्य और शक्ति के साथ सामना करके वह सैन्याध्यक्ष और पूरी सेना को वापस जाने पर मज़बूर करते है। तत्पश्चात राजा स्वयं युद्ध लड़ने का निर्णय करके अपनी पूरी सेना के साथ आळ्वार पर हमला बोलते है। आळ्वार फिर एक बार पराक्रम बताते हुए लड़कर पूरी सेना को परास्त कर देते है। आळ्वार की पराक्रमता पर राजा बहुत प्रसन्न हो शान्ति घोषित करते हैं और उनकी जयजयकार करते हैं। राजा की कुयुक्ति से बेख़बर आळ्वार उनके पास चल पड़ते हैं और राजा अपने मंत्री की सहायता से उन्हें बंदी बनाकर बकाया शुल्क देने का निर्बंध करते है। मंत्री उन्हें एम्पेरुमान के सन्निधि में कैद कर देते हैं और आळ्वार ३ दिन तक बिना कुछ प्रसाद पाये रहते हैं। कहा गया की उस समय तिरुनरयूर नाच्चियार अपने तिरुनरयूर नम्बि को बताती हैं की आळ्वार को भुखे देख उन्हें सहन नहीं हो रहा हैं और स्वयं प्रसाद लेकर आळ्वार को प्रदान करती हैं। आळ्वार उस समय श्रीरंगनाथजी और श्रीनिवास के ध्यान में निमग्न हो जाते है। काँची देवपेरुमाळ आळ्वार के स्वप्न में आकर काँचीपुरम में वेगवती नदी के किनारे निक्षिप्त निधि का पता बताते हैं। आळ्वार निधि को लेकर राजा का बकाया शुल्क भर देते है और बाकि निधि से तदीयाराधन जारी रखने के लिये तिरुक्कुरैयलूर् चले जाते हैं। पुनः वह राजा अपने सैनिक को शुल्क वसूल करने के लिए भेजने पर आळ्वार चिंताग्रस्त होते हैं। पुनः देवपेरुमाल स्वप्न में साक्षात्कार होते हैं और वेगवती नदी तट पे स्थित रेती लेकर सैनिकों को देने का आदेश देते है। आळ्वार ठीक उसी तरह सैनिकों को रेती देते हैं। सैनिकों को रेती अणु अमुल्य रत्न जैसे दिखाई देते हैं। रेती के अणु लेकर खुशी से सैनिक राजा के पास लौट जाते हैं और राजा को घटित विषय विस्तार रूप से निवेदन करते है। आळ्वार की महानता उन्हें समझ आती हैं उन्हें राजदरबार आने का निमंत्रण देते हैं सादर से उन्हें स्वागत कर अपने दोषों के लिये क्षमा प्रार्थना करते हैं और ढ़ेर सारा धन देते हैं। अपने पापों का प्रायश्चित करते हुए अपनी पूरी सम्पत्ति देवालयों और ब्राह्मणों में दान करते है।

आळ्वार अपना तदीयाराधन ज़ारी रखते हैं और इस कारण उनकी संपत्ति शून्य हो जाती हैं। आळ्वार ठान लेते हैं की वे तदीयाराधन किसी भी तरह ज़ारी रखेंगे चाहे उन्हें चोरी ही क्यों न करनी पड़े। धनी लोगों से चोरी करके भक्ति के तदीयाराधन में जुट जाते हैं। सर्वेश्वर सोचते हैं की आळ्वार चोरी करके भी उस संपत्ति को श्रीवैष्णवों की तदीयाराधना में लगा रहे हैं यानि आळ्वार चरम पुरुषार्थ में स्थित है और आळ्वार को निस्संकोच दिव्य ज्ञान प्रदान कराके उन्हें इस सँसार सागर से उन्नति की ओर मार्गदर्शन करने का निर्णय लेते हैं। आळ्वार को ज्ञान प्रदान करने के उद्देश से एम्पेरुमान अपने देवियों के साथ आळ्वार को अनुग्रहित करने के लिये उनकी राह में नए दूल्हा दुल्हन की तरह सुन्दर आभूषणों से सज़धज बारात में वायळालिमणवालन के रूप में निकल पडे। बड़ी मात्रा में लूटने का मौका देखकर आळ्वार जोश में आ जाते हैं और एम्पेरुमान और उनकी बारात को घेर लेते हैं और सब कुछ लूट लेते हैं। आखीर में आळ्वार एम्पेरुमान के श्रीपाद में लगी हुई बिछिया को क़तर देते हैं। उनकी शूरता पर एम्पेरुमान आश्चर्य चकित हो जाते हैं और ''नम् कलियनो'' कहकर सम्बोधित करते है अर्थात क्या आप हमारे कलियन हो? (महान शौर्यवान को कलियन कहा जाता हैं)।

तदनन्तर आळ्वार पूरे आभूषणों को और संपत्ति को एक पोटली में बांध कर उठाने का प्रयत्न करते हैं लेकिन उठा नहीं सकते। आळ्वार दूल्हे राजा की ओर देखकर गरजते हैं की उन्होंने ही कुछ मंत्र का प्रयोग किया हैं इस इलज़ाम को मानकर एम्पोरुमान उन्हे दुःख भरे संसार से विमुक्त करने वाला भगवत कैंकर्य से अनुग्रहित ऐसे तिरुमंत्र का उपदेश करते हैं। भगवान के दिव्य दर्शन पाकर शीघ्र ही उन्होने प्रबंधों की रचना की।

भगवान श्रीरंगनाथ के सभी अंतरंग कैंकर्यों की इच्छा के कारण श्रीनागपट्टनम में स्थित एक अवैदिक संप्रदाय से सम्बंधित एक सुवर्ण प्रतिमा को आळ्वार अपने शिष्य की सहायता से वहाँ से चुराकर श्रीरंगम् निकल आते हैं और वहीं पर भगवान श्रीरंगनाथ कि नित्य सेवा करते हुए निवास करते हैं।

श्री परकाल सूरी ने १०५ वर्षों तक इस लीला विभूति में भगवान और भागवतों का कैंकर्य सम्पादन किया और सभी दिव्यदेशों के भगवान का मंगलाशासन किया। श्री परकाल सूरी ने सात दिव्यप्रबन्धों का प्रणयन किया जिसमें १३६४ गाथाएँ हैं। अन्त में कुरंग नगर आकर भगवान श्रीरंगनाथ का आदेश प्राप्त करके अपने पार्थिव शरीर का त्याग करके नित्य लोक को प्रस्थान किये।

श्री प्रपन्नामृतम्

(७वाँ अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी

प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड

मोबाइल - ९९००९२६७७३

(गतांक से)

श्रीरामानुजाचार्य की रक्षार्थ भगवान यामुनाचार्य द्वारा आलवन्दारस्तोत्र की रचना

एक समय यामुनाचार्य स्वामीजी श्रीरामानुजाचार्य को देखने के लिए कांची आये। आचार्यागमन का समाचार सुनकर और-भक्तों के साथ श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी आगे आये। महाविद्वान् श्री यामुनाचार्य स्वामीजी नम्रतापूर्वक श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी के साथ कमलनयन भगवान वरदराज के दिव्यमंगलविग्रह का दर्शन कर एवं तीर्थ तुलसी शठकोपादि स्वीकार करके स्तुति करते हुए मंगलानुशासन किया।

श्रीहस्तिगिरिवासाय मंगलं मधुवैरिणे।।
वैकुण्ठलोकनाथाय मंगलं विश्वरूपिणे।
भक्ताभीष्टप्रदायास्तु मंगलं परमात्मने।।
परब्रह्म स्वरूपाय मंगलं करुणाब्धये।
पीताम्बरधरायास्तु मंगलं कंसवैरिणे।।

वरदराज भगवान का उपर्युक्त मंगलानुशासन करके श्री यामुनाचार्यजी श्रीरामानुजाचार्य को देखने के लिए बाहर आये। उसी समय यादवप्रकाशाचार्य भी अपने शिष्यों के साथ भगवान वरदराज का दर्शन करने आ रहे थे। शिवभक्त ब्राह्मण मुनियों को आते देखकर भगवान यामुनाचार्य श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी से बोले- कांचीपूर्ण! आती हुई ब्राह्मणों की टोली को देखो और सबों के आगे चलते हुए उस एकदण्डी का चरित्र मुझे बताओ।

आचार्य की आज्ञा पाकर श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी बोले- ''भगवन! ये ही सम्पूर्ण शास्त्रों एवं तत्त्वों के ज्ञाता यादवप्रकाशाचार्य हैं। ये स्वमत के पोषक और परमत के निरासकर्त्ता माने जाते है। इन्हीं के यहाँ श्रीरामानुजाचार्य अध्ययन करते हैं। देखें श्रीमान्! आजानुबाहु एवं अपने हाथ से मित्र का हाथ पकड़कर श्रीरामानुजाचार्य ही चल रहे है। धारण किये हुए इनके श्वेत वस्त्र युगल, श्वेत यज्ञोपवीत, नवरत्नमय कुण्डल एवं ऊर्ध्वपुण्ड्र यद्यपि यादवप्रकाशाचार्य को नहीं आकृष्ट करते फिर भी अन्य सभी लोग इनके कम्बुकण्ठ, कोमल-काले कुंचित्केश, चाँद की तरह चमकता चेहरा, विशाल वक्ष, रक्ताभ अधर एवं विपुल स्कन्ध को देखकर मुग्ध हो जाते हैं। इसके बाद श्री कांचीपूर्ण स्वामी ने भगवान यामुनाचार्य को श्रीरामानुजाचार्य से सम्बद्ध विन्ध्यारण्य वाली कहानी सुना डाली। श्रीरामानुजाचार्य से बातें करना चाहकर भी श्री यामुनाचार्य यह सोचकर कि दुष्टों से घिरे श्रीरामानुजाचार्य मेरे पास आ नहीं सकेंगे? वरदराज भगवान से उनकी विज्ञानवृद्धि के लिए प्रार्थना करने लगे -

यस्य प्रसादकलया बधिरः श्रृणोति, पंगुः प्रधावति जवेन च वक्ति मूकः।
अन्धः प्रपश्यति सुतं लभते च बन्ध्या, तं देवमेव वरदं शरणं गतोऽस्मि।
लक्ष्मीश पुण्डरीकाक्ष कृपां रामानुजे तव। विधाय स्वमते नाथ, प्रविष्टं कर्तुमर्हसि।

भगवान वरदराज की उपर्युक्त प्रार्थना करके श्री यामुनाचार्यजी ने शिष्यों के साथ कांची से श्रीरंगम् आकर श्रीरामानुजाचार्य के हित की कामना से आलवन्दार स्तोत्र की रचना की।

।। श्रीप्रपन्नामृत का ७वाँ अध्याय पूर्ण हुआ ।।

क्रमशः

श्री कलिवैरिदास स्वामीजी
(श्री नम्पिल्लै)

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. १० दिसंबर २०१९

- श्रीमती शालिनी डी.बुबना
मोबाइल - ९८३११२१२८९

तिरुनक्षत्र - कार्तिक मास, कृत्तिका नक्षत्र

अवतार स्थल - नम्बूर

आचार्य - श्री वेदांति स्वामीजी

शिष्य - वडक्कु तिरुवीधि पिळ्ळै, पेरियवाच्चान पिळ्ळै, पिण्बळगिय पेरुमाळ जीयर, ईयुण्णि माधव पेरुमाळ, नाडुविळ तिरुवीधि पिळ्ळै भट्टर इत्यादि

परमपद प्रस्थान - श्रीरंगम्

रचना - तिरुवाय् मोळि के ३६००० पडि ईडु व्याख्यान, कण्णिनुन् शिरुताम्बु व्याख्यान, तिरुवन्दादियों के व्याख्यान, तिरुविरुत्तम् व्याख्यान

नम्बूर गाँव में वरदराजन के नाम से जन्में और नम्पिळ्ळै के नाम से प्रसिद्ध हुए। वे तिरुक्कलिकंरी दासर, कलिवैरीदासर, लोकाचार्यर, सूक्ति महार्णवर, जगदाचार्य और उलगसीरियर इत्यादि नामों से भी जाने गए हैं।

पेरिय तिरुमोळि ७.१०.१० में बताया जाता हैं की- तिरुकण्णमंगै एम्पेरुमान् तिरुमंगै आळवार् के पाशुरों का अर्थ स्वयं उन्ही कि बोली में सुनना चाहते थे - इसी कारण माना जाता हैं कि कलियन नम्पिळ्ळै हुए और एम्पेरुमान् पेरियवाच्चान पिळ्ळै के रूप में पुनरावतार लेकर अरुलिच्चेयल के सकल अर्थ उनसे सुने और सीखें।

श्री वेदांति स्वामीजी ने अपनी ९००० पडि कि व्याख्यान का एक सुन्दर प्रति लिपि बनाना चाहा। जब श्रीवैष्णव गोष्टि में विचार किया तब नम्बूर वरदराजर का नाम प्रस्ताव किया गया। वरदराजर श्री वेदांति स्वामीजी को आश्वासन देते हैं कि वे उनके मन को संतुष्ट होने कि तरह लिखेंगे। श्री वेदांति स्वामीजी पहले उन्हें ९००० पडि कि व्याख्यान को सुनाकर अनन्तर उन्हें मूल प्रति देते हैं। वरदराजर कावेरी के उस पार स्थित अपने स्वग्राम को जाकर लिखने कि योचना किये ताकि वो लिखने पे ध्यान देकर जल्दी से समाप्त कर सके। नदि पार करते समय अचानक से बाड़ आ जाती हैं और वरदराजर तैर कर अगले तट पहुँचते हैं। तैरते समय मूल प्रति जो उनकी हाथों में थी छूट जाती हैं और वे बर्बाद हो जाते हैं। स्वग्राम पहुँचकर अपने स्वग्राम पहुँचकर आचार्य के दिव्यमंगलस्वरूप और उनके द्वारा बतलाये गए दिव्यार्थो पर ध्यान केंद्रित कर वापस ९००० पड़ी व्याख्यान लिखना शुरु कर देते हैं। तमिळ भाषा और साहित्य के विद्वान होने के कारण उचित स्थल पर सुन्दर से अर्थ विशेषों को मिलाकर श्री वेदांति स्वामीजी के पास वापस जाकर उनको वह पृष्टि सोंप देते हैं। श्री वेदांति स्वामीजी व्याख्यान पढ़कर जान लेते हैं कि उसमें कुछ बदलाव किया गया हैं और उनसे घटित घटना के बारे में पूछते हैं। वरदराजर उन्हें सब कुछ बताते हैं और श्री वेदांति स्वामीजी सुनके प्रसन्न हो जाते हैं। वरदराजर की ख्याति समझते हुए उन्हें ''नम्पिळ्ळै'' और ''तिरुक्कलिकंरी दासर'' से उनका नाम करण करते हैं।

जिस प्रकार श्री पराशर भट्टर और श्री वेदांति स्वामीजी के बीच का रिश्ता और उनके संवाद (सम्बन्ध) थे, उसी प्रकार श्री वेदांति स्वामीजी और श्री कलिवैरिदास स्वामीजी के बीच का रिश्ता और संवाद अति आनन्ददायक और अत्युत्तम ज्ञानार्थों से भर्पूर थे। इनके बीच हुए संवाद भगवद्बन्धुवों के लिये निम्नलिखित में प्रस्तुत है :

श्री वेदान्ति स्वामीजी से श्री कलिवैरिदास स्वामीजी पूछते हैं कि क्यों जब उपयान्तर के लिए बहुत सारे प्रमाण हैं लेकिन शरणागति को कोई प्रमाण नहीं हैं। श्री वेदांतिस्वामीजी पहले बताते हैं कि जब कोई विषय प्रत्यक्ष से जान सकते हैं उसे प्रमाण कि जरूरत नहीं होती हैं- उदाहरण बताते हैं कि डूबता हुआ मनुष्य किसी साधन को पकड़ कर ठहरता हैं या उसे पकड़ लेता हैं जो नहीं डूब रहा हैं- ठीक उसी तरह हम संसार में डूब रहे हैं और भगवान वो हैं जो नहीं डूब रहे हैं और भगवान कि शरण लेना बहुत उचित उपाय हैं। अनन्तर वे शरणागति शास्त्र कि मान्यता बताते हुए शास्त्र से कुछ प्रमाण दिखाते हैं। वे कहते हैं कि एक विषय कि मान्यता उस पर आधारित प्रमाणों कि गिनती से नहीं किया जाता - उदाहरण के लिए इस संसार में संसारि ज्यादा और सन्यासी कम हैं, इसका अर्थ यह नहीं हैं कि संसारि होना उचित हैं। यह जवाब सुनकर नम्पिळ्ळै प्रसन्न हो जाते हैं।

श्री कलिवैरिदास स्वामीजी श्री वेदांति स्वामीजी से पूछते हैं कि कब एक मानव स्वयं को श्रीवैष्णव मान सकता हैं? श्री वेदांति स्वामीजी उत्तर देते हुए बताते हैं कि जब अर्चावतार में परतत्त्व पहचान सकेंगे, जब अन्य श्रीवैष्णव के संतान और धर्मपत्नी को स्वपरिवार के सभ्य कि तरह मानते हैं (उन का लगाव स्वपरिवार और अन्य श्रीवैष्णव के परिवार पर सामान रहेगा) और जब अन्य श्रीवैष्णव अपमान करें उसे खुशी के साथ स्वीकार करें तब हम खुद को श्रीवैष्णव कह सकते हैं।

जब श्री कलिवैरिदास स्वामीजी श्री वेदांति स्वामीजी के पास श्रीभाष्यम् सुन रहे थे तब श्री वेदांति स्वामीजी उन्हें आदेश देते हैं कि वे उनके भगवान का तिरुवाराधन करें। श्री कलिवैरिदास स्वामीजी उनसे कहते हैं कि तिरुवाराधन का क्रम उन्हें पता नहीं है तब श्री वेदांति स्वामीजी उनसे कहते हैं कि द्वय महा मंत्र जपते हुए करें। इससे यह साबित होता हैं कि अपने पूर्वाचार्य सब विषयों के लिए द्वय महा मन्त्र पर पूरी तरह से निर्भर थे।

श्री कलिवैरिदास स्वामीजी पूछते हैं कि भगवान के अवतारों का प्रयोजन क्या हैं? श्री वेदांति स्वामीजी उन्हें बताते हैं कि भगवान ने बडे-बड़े कार्य अपने कंधे पे ले लिया हैं यह सुनिश्चित करने के लिए कि जो भी भागवत अपचार करेंगे उन्हें उचित तरह से दण्डित किया जा सके। (उदाहरण के लिये श्रीकृष्ण भगवान ने खुद बहुत कष्ट सहन करके यह पक्का करते हैं कि दुर्योधन जो उनके भक्त के प्रति अपचार किया हैं उसे अंत में मृत्यु दण्ड प्राप्त हो)।

श्री कलिवैरिदास स्वामीजी पूछते हैं कि भागवत अपचार का अर्थ क्या होता हैं? श्री वेदांति स्वामीजी बताते हैं कि अन्य श्रीवैष्णव को खुद के समान मानना। वे आल्वारों के कई पाशुरों को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करते हुए दर्शाते है की भागवत कैसे सर्वश्रेष्ठ, उत्तम और महान है। इस विषय को ध्यान में रखते हुए हमें सदैव यह मानना चाहिये की प्रत्येक श्रीवैष्णव हमेशा हमारि तुलना में उत्तम और सर्वश्रेष्ठ है। वे यह भी कहते हैं कि आळवार और पूर्वाचार्यों कि तरह हमें भी सदैव भागवतों कि स्तुति करनी चाहिए।

श्री वेदांति स्वामीजी श्री कलिवैरिदास स्वामीजी से कहते हैं कि भगवत अनुभव में निमग्न हुए भक्तों को इतर लोक के विषय अनुभव जैसे ऐश्वर्य, अर्थ, काम पूरी

तरह से त्यजनीय हैं। इस विषय को आल्वार के कई पाशुरों का उदाहरण लेकर समझाते हैं। उदाहरण के लिये - श्री वेदांति स्वामीजी श्री परकाल स्वामीजी की वार्ता को दोहराते है। वे कहते है - तिरुमंगै आळवार ने भौतिक जगत के प्रति अपने आसक्ती का त्याग कर दिया जब उनको भगवान के दिव्यगुणों और वैभव का एहसास हुआ और तुरन्त अपने दिव्यप्रबन्ध को शुरू करते हुए उन्होंने कहा - ''वाडिनेन वाडि... नारायणा एन्नुम् नामम्'' (जिसका अर्थ हैं कि भगवान का दिव्यनाम मिलने तक मैं संसार के हाथों में दुःख झेल रहा था)। यह सुनने के बाद श्री कलिवैरिदास स्वामीजी तुष्ट हो जाते हैं और उसी क्षण से उनका कैंकर्य करते और कालक्षेप सुनते श्री वेदांति स्वामीजी के साथ रह जाते हैं।

श्री वेदांति स्वामीजी श्रीसहस्त्रगीति का कालक्षेप १०० बार करते हैं और श्री कलिवैरिदास स्वामीजी उनके लिए सदाभिषेक महोत्सव का आयोजन करते हैं। श्री वेदांति स्वामीजी के इन कालक्षेपों के द्वारा पूर्वाचार्यों से दिये गए सभी अर्थ विशेष लाभ पाते हैं।

श्री कलिवैरिदास स्वामीजी श्रीरंगम् पेरिय कोविल मूल स्थान में प्रदक्षिण करने के पूर्व दिशा (पेरिय पेरुमाळ तिरुवडि कि ओर) में नित्य अपना कालक्षेप करते थे। इसी कारण आज भी हम सन्निधि में दर्शन करने के पश्चात उस स्थान में प्रणाम करते हैं। श्री कलिवैरिदास स्वामीजी कालक्षेप करते समय देखने के लिए पेरिय पेरुमाळ खड़े हो जाते थे। तिरुविळक्कु पिच्छण् (एक श्रीवैष्णव जो सन्निधि के दीप और रौशनी के जिम्मेदार हैं) खड़े हुए पेरियपेरुमाळ को पुनः सन्निधी में बैठाकर कहते हैं कि अर्चावतार में उन्हें हिलने कि इजाझत नहीं हैं। श्री कलिवैरिदास स्वामीजी को भाषण देते हुए देखने और सुनने के लिए भगवान ने उनकी अर्च समाधी को भी तोडा हैं।

श्री कलिवैरिदास स्वामीजी के भाषण इतने प्रसिद्ध थे कि लोग कहते थे कि क्या यह नम्पेरुमाळ कि गोष्टी हैं या श्री कलिवैरिदास स्वामीजी कि गोष्टी। जिस तरह नम्पेरुमाळ लोगों को अपनी पुरप्पाड इत्यादि कि ओर आकर्षित करते थे उसी तरह श्री कलिवैरिदास स्वामीजी अपने वचनों से उन्हें आकर्षित करते थे।

श्री कलिवैरिदास स्वामीजी की विनम्रता अद्वितीय और असामान्य थी। एक बार कन्दाड़ै तोळप्पर (मुदली आण्डान् वंशी) नम्पेरुमाळ के आगे श्री कलिवैरिदास स्वामीजी कि निंदा स्तुति करते हैं। उनकी महानता तोळप्पर् से सहन नहीं हो रहा था और वह असहनता कठिन शब्दों के रूप में बाहर आए। श्री कलिवैरिदास स्वामीजी ने बिना कुछ बोले उनका अपमान सहन करके अपनी तिरुमालिगै को निकल पड़ते हैं। तोळप्पर जब अपने तिरुमालिगै पहुँचते हैं, उनकी धर्मपत्नी जो इस विषय के बारे में जान लेती हैं उन्हें उनकी बर्ताव पे सलाह देती हैं और श्री कलिवैरिदास स्वामीजी की महानता बताती हैं। उनसे आग्रह करती हैं कि वे श्री कलिवैरिदास स्वामीजी के पास जाकर उनके चरण कमल पे माफी माँगे। अन्त में उन्हें अपनी भूल समझ में आती हैं और रात में श्री कलिवैरिदास स्वामीजी कि तिरुमालिगै को जाने कि ठान लेते हैं। जब घर से निकल पड़े और दरवाज़ खोला तब उन्होंने एक व्यक्ति उनका इंतज़ार करते हुए दिखाई दिये जो दूसरे कोई नहीं थे बल्कि श्री कलिवैरिदास स्वामीजी स्वयं थे। तोळप्पर को देखने के तुरंत बाद श्री कलिवैरिदास स्वामीजी नीचे गिर कर उन्हें प्रणाम करते हैं और कहते हैं कि उन्होंने कुछ भूल किया होगा जिस के कारण तोळप्पर उनसे नाराज़ हो गये। तोळप्पर हैरान हो जाते हैं और उनकी महानता अच्छी तरह से समझ आती हैं। भूल उन्होंने किया हैं लेकिन नम्पिळ्ळै इतने विनम्र निकले कि

उस भूल को उन्होंने अपने कंधे पे ले लिया और माफ़ी माँगने लगे। तोळप्पर तक्षण उन्हें प्रणाम करते हैं और कहे कि उनकी विनम्रता के कारण उन्हें उस दिन से ''लोकाचार्य'' के नाम से लोग जानेंगे। जो मानव महान होने के बावजूद अपनी चाल चलन में विनम्रता रखता हैं उन्हें ''लाकाचार्य'' कहते हैं और नम्पिळ्ळै उस पद के लायक हैं। नम्पिळ्ळै के प्रति अपनी द्वेष भाव को छोड़कर तोळप्पर अपनी पत्नी के साथ उनकी सेवा में जुड जाते हैं और कई शास्त्रार्थ उनसे सीखते हैं। इस घटना को श्री वरवरमुनि स्वामीजी अपनी उपदेश रत्न माला में बताते हुए नम्पिळ्ळै और तोळप्पर को गौरवान्वित करते हैं। इसी से हम नम्पिळ्ळै कि निश्चलता/पवित्रता जान सकते हैं। हम यह भी जान सकते हैं इस घटना के बाद तोळप्पर भी नम्पिळ्ळै के सहवास से पवित्र होते हैं।

नडुविळ तिरुवीधि भट्टर जो भट्टर वंशीय थे नम्पिळ्ळै की कीर्ति से असहन होते हैं और उनसे ईर्षा भाव बढ़ा लेते हैं। एक बार जब वे राजा के दरबार जा रहे थे तब उनके साथ पिन्बळगीय पेरुमाळ जीयर को अपने साथ लेकर जाते है। राजा उन दोनों को स्वागत करके उन्हें सम्भावन देकर आसीन करते हैं। राजा ने भट्टर से श्री रामायण से एक प्रश्न पूछते हैं। उन्होंने पूछा जब एम्पेरुमान ने एलान किया था कि रामावतार में वे परत्वता नहीं दर्शाएंगे तब वे कैसे जटायु को ''गच्छ लोकान् उत्तमान'' (सबसे उत्तम लोक - परमपद को जाईये) कह सकते हैं। भट्टर को समाधान नहीं मालुम था और उनकी ख्याति के बारे में चिंतित हो रहे थे और इस बीच राजा कुछ अन्य कार्य में मग्न हो गए। भट्टर जीयर से पूछते हैं कि अगर नम्पिळ्ळै को यह प्रश्न पूछा गया होता तो वे इसका क्या उत्तर देंगे। जीयर तुरंत उत्तर देते हैं कि वे ''सत्येन लोकान जयति'' (एक सच्चा इन्सान तीनों लोकों को जीत सकता हैं) इति सूत्र से समझाते। भट्टर उस श्लोक पर ध्यान करके उसका अर्थ जानकर राजा को समझाते हैं कि श्रीराम सत्यवादी थे और उनकी सत्यनिष्ठा की शक्ति से किसी को भी किसी भी प्रदेश पहुँचा सकते हैं। जवाब सुनकर राजा बहुत प्रसन्न होकर भट्टर के ज्ञान की प्रशंसा करते हैं और उन्हें ढ़ेर सारा सम्पत्ति प्रदान करते हैं। नम्पिळ्ळै के केवल एक व्याख्या की महत्ता को जानकर भट्टर तुरन्त उनके पास जाकर सारी संपत्ती को समर्पित कर देते है। नम्पिळ्ळै के चरण-कमलों का आश्रय (शरण) पाकर उनके शिष्य बनते हैं और उसके बाद निरंतर नम्पिळ्ळै की सेवा में जुट जाते हैं।

नम्पिळ्ळै के जीवन में ऐसे कई घटना हैं जहाँ वे उनके शिष्यगण को अमूल्य पाठ और उपदेश देते है।

एक बार नम्पिळ्ळै अपने शिष्य गण के साथ तिरुवेळ्ळरै से वापस नाव में आ रहे थे, उसी समय नाविक ने अपने दृष्टिकोण से कहा - कावेरी में बाढ आया है और इस कारण उपस्थित गोष्टि में किसी एक व्यक्ति को नदी के पानी में कूदना होगा जिससे नाव संतुलित रहेगी और नम्पिळ्ळै बच जाए। यह सुनते ही एक बूढ़ी औरत बाढ के पानी में कूद पड़ती है और यह देखकर नम्पिळ्ळै दुःखित हो जाते हैं। जब वे तट पहुँचते हैं तब उस बूढ़ी औरत कि आवाज़ नजदीकि द्वीप से सुनायी देती हैं। बूढ़ी औरत बताती हैं कि नम्पिळ्ळै प्रत्यक्ष होकर उनकी रक्षा किये। इस घटना में बूढी औरत यह स्पष्ट रूप से दर्शाति है कि किस तरह उन्होने अपने प्राण-त्याग करके अपने आचार्य की सेवा की उसी प्रकार हमे भी करना चाहिये। नम्पिळ्ळै ने यह दर्शाया है की कैसे एक आचार्य विपरीत परिस्थितियों में अपने निर्भर शिष्यों का संरक्षण करते हैं।

(क्रमशः)

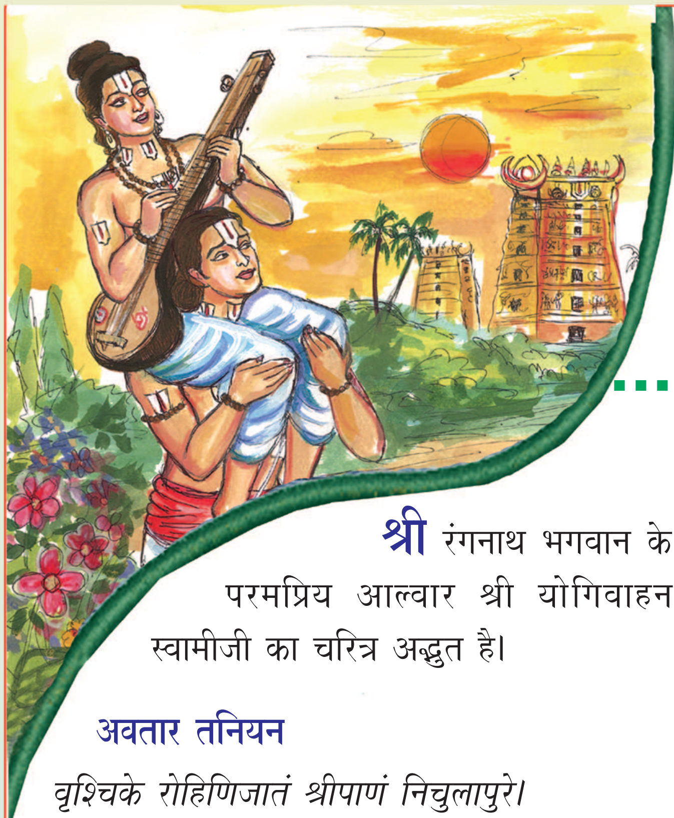

तिरुप्पाणाळ्वार

- श्रीमती शकुंतला उपाध्याय
मोबाइल - ९०३६८८१०८६

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. ११ दिसंबर २०१९

श्री रंगनाथ भगवान के परमप्रिय आल्वार श्री योगिवाहन स्वामीजी का चरित्र अद्भुत है।

अवतार तनियन

वृश्चिके रोहिणिजातं श्रीपाणं निचुलापुरे।
श्रीवत्सांङ्क गायकेन्द्र मुनिवाहनमाश्रये।।

तनियन

अपादचुडमनुभूय हरीं शयानं मध्ये,
कवेर दूहितुर्मुदितान्तरात्मा।
अदृष्टतां नयनयोर्विषयान्तराणां,
यो निश्चिकाय मनवै मुनिवाहनं तम्।।

श्री योगीवाहन सूरी श्री सिय के सजीवन मूरी हो,
ला कीजिये दुःख दूरी कर जन की धन इच्छा पूरी को।
क्योंकी प्रभू के परम प्रिय आल्वार मुनिवाहन अहौ,
दिन रैन की बेचयनता तुम किमी दया सागर सहो।।

... श्री श्री स्वामीजी सीतारामाचार्यजी महाराज, वैकुंठ मंडप, अयोध्या।

अवतार

मुक्तिप्रदायिनी कावेरी के तट पर श्रीरंगम् से एक कोस की दूरी पर निचुलापूरी (उरैयूर) नामक नगरी में धर्मकर्मा नामक राजा राज्य करता था। उसी परमधार्मिक राजा की पुत्री निचुलानायकी (उरैयूर नाच्चियार) ने आगे चलकर भगवान श्रीरंगनाथ को पति रूप में प्राप्त किया। धर्मवर्मा के पश्चात् उसी नगरी में (कलि के १२२ वर्ष के बाद) दुर्मति नामक संवत्सर में कार्तिक मास में पूर्णिमा तिथि रोहिणी नक्षत्र सोमवार के दिन किसी खेत में धान के गुच्छा से श्री पाणसूरी ने अवतार लिया। श्री पाणसूरी भगवान के **श्रीवत्स के अंश से** अवतार लिये।

बाल्यावस्था से ही भगवदनुभव में तल्लीन श्री पाणसूरी

यद्यपि वे अयोनिज थे, उनका बाल्यकाल पंचम वर्ण के घर में बीता। श्री विष्वक्सेन जी से पंचसंस्कृत होकर वें भागवतोत्तम बनगये। श्री पाणसूरी भगवान के गुणों का सामवेद से चिन्तन करते रहने के कारण महातेजस्वी और प्रतिभासंपन्न हुये। वें भक्तिरस में तल्लीन होकर सभी सांसारिक रसों को भूलगये थे। अपने आपको अपवित्र मानकर **''श्रीरंगम् की पवित्र भूमि को अपने पैरों से कैसे स्पर्श करु?''** यह विचार करके वें श्रीरंगम् से दूर निचुलापुरी में रहते थे तथा श्रीरंगम् नगरी को ज्ञानदृष्टी से देखा करते थे। अपने वर्णाश्रम धर्म को सम्मान देकर श्री पाणसूरी कभी भी श्रीरंगक्षेत्र को नहीं गए। वे प्रतिदिन कावेरी नदी के दक्षिण दिशा से चक्रधारि भगवान श्रीरंगनाथ के दर्शन करते हुए उनका कीर्तन करते थे। भगवान

श्रीरंगनाथ भी श्री पाणसूरी की स्तुति स्वीकार करके आनन्द अनुभव करते थे। श्री पाणसूरी केवल श्रीरंगनाथ भगवान के ही अनुभव में श्रद्धा रख कर बाकी विषय में निरासक्ति प्रदर्शित करते थे।

श्रीरंगनाथ भगवान के विशेष कृपा

श्रीरंगम् में सारंग नामक महायोगी भगवान रंगनाथ का कैंकर्य करते थे। एक बार वें कावेरीतट पर जल लेने स्वर्णकुंभ लेकर पधारें। वहाँ पर पंचम वर्णोत्पन्न श्री पाणसूरी को देखकर उनको दूर हटने के लिए बहोत बार कहा। परंतु भगवान के गुणों में निमग्न श्री पाणसूरी समाधि अवस्था तक पहुँच गये थे। इसी कारण उन्हे सारंग महायोगी की बात सुनाई नही दी। उन्होंने उन्हे ढोंगी समझ कर पत्थरों से मारकर उनके अंग अंग को घायल कर दिया परंतु इसका भी श्री पाणसूरी को पता न चला। यह देखकर श्रीरंगनाथ भगवान को महाकष्ट हुआ और उनके विग्रह से रक्त की बूँदे टपकने लगी और पट बंद होगये। यह देखकर चोलराजा सहित सभी लोग भयभीत हुये।

भगवान रंगनाथ ने सारंग योगी को स्वप्न दिया की तुम मेरे महान भक्त श्री पाणसूरी को अपने कंधेपर बैठाकर मेरी सन्निधी में ले आओ। भगवान की आज्ञा को शिरोधार्य मानकर सारंगमुनि श्री पाणसूरी को कंधेपर बैठाकर रंगनाथ भगवान के पास लेकर आये। श्री पाणसूरी ने भगवान के विमान की प्रदक्षिणा की और भगवान की सन्निधी में पधारें। अपने परम प्रेमी को पाकर भगवान की खुशी का ठिकाना न रहा। भगवान ने श्री पाणसूरी को अपने दिव्य श्रीविग्रह का दर्शन कराया। श्री पाणसूरी की दृष्टि भगवान के चरणारविंदों में स्थिर हो गयी।

श्री सारंग मुनि (सारंग योगी) ने श्री पाणसूरी को अपने कंधेपर बैठाकर उनके वाहन बनें इसलिये श्री पाणसूरी ''श्री मुनिवाहन'' एवं ''श्री योगिवाहन'' नाम से भी प्रसिद्ध हैं।

दिव्यप्रबन्ध - श्री अमलनादिपिरान

सभी आल्वारों के दिव्यप्रबंधों में अपनी अपनी विशेषता रही। इतर सभी आल्वारों से भिन्न विलक्षण तिरुप्पाणाळ्वार ने कठवल्लि उपनिषद से निर्णित किये गए सिद्धान्त के अनुसार केवल अर्चारूपि भगवान के प्रत्येक रूप से भगवान श्रीरंगनाथ की ही भक्ति की है। श्रीरंगनाथ भगवान अर्चा समाधि (सामान्य लोगों से बातचीत नही करते - मौन) में रहने पर भी श्री पाणसूरी को अपना सौंदर्य प्रदर्शित करके मोहित किये। भगवान का रूप दर्शन किये श्री पाणसूरी उस दिन से श्रीरंगनाथ भगवान के दिव्य मंगल विग्रह का अनुभव कर रहे थे। उनके रचित दिव्यप्रबन्ध अमलनादिपिरान नाम से प्रसिद्ध हैं। जब श्री पाणसूरी ने दिव्यप्रबंध भगवान की सेवा में समर्पित किया तब भगवान ने उनका शरीर आत्मसात करलिया। आजभी भगवान रंगनाथ की सन्निधी में श्री पाणसूरी के विग्रह विराजमान हैं।

श्री पाणसूरी ने अपने वीणा के मधुर संगीत से दिव्यप्रबन्ध अमलनादिपिरान के नौ पाशुर श्रीरंगनाथ भगवान के सन्निधि पहुँचने तक की और दसवाँ पाशुर श्रीरंगनाथ भगवान के सन्निधान में गाकर नित्यसूरीयों/मुक्तगण और परमपदनाथ के पास नित्य कैंकर्य करने के लिए परमपद प्रस्थान किया। पूर्वाचार्य चरित्र से हमें यह ज्ञात होता हैं की तिरुप्पाणाळ्वार के प्रति श्री यामुनाचार्य स्वामीजी को विशेष प्रेम था।

तिरुप्पाणाळ्वार का चरित्र अळगिय मणवाल पेरुमाळ नायनार से कृत/लिखा गया प्रामाणिक ग्रंथ 'आचार्य हृदय' ८५ चूर्णिका में विशेष रूपसे वर्णित है।

तोंडरडिप्पोडि आळ्वार

(श्री भक्तांघ्रिरेणु स्वामीजी)

- श्री नरसिंग खेमका
मोबाइल - ९३४८६५५२२०

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. १६ दिसंबर २०१९

तिरुनक्षत्र - मार्गशीर्ष मास, ज्येष्ठा नक्षत्र

अवतार स्थल - तिरुमण्डंगुडि

आचार्य - श्री विष्वक्सेन स्वामीजी

ग्रंथ रचना सूची - तुरुमालै, तिरुपळ्ळियेळ्ळुच्चि

परमपद प्रस्थान प्रदेश - श्रीरंगम्

श्री वेदांती स्वामीजी अपने तिरुपळ्ळियेळ्ळुच्चि के व्याख्यान की अवतारिका में ''अनादि मायया सुप्तः'' प्रमाण से साबित करते है कि आळ्वार संसारी थे अनादि काल से अज्ञान के कारण संसार में निद्रावस्था में थे और भगवान श्रीमन्नारायण ने उन्हें जागृत किया है। उसके (उन्हें परिपूर्ण ज्ञान से अनुग्रह किया) पश्चात् श्रीरंगनाथ भगवान योगनिद्रा में चले जाते है और आळ्वार उन्हें उठाने की चेष्ठा करते है और भगवान से प्रार्थना करते है कि उन्हें कैंकर्य प्रदान करे।

श्री पेरियवाच्छान पिळ्ळै स्वामीजी तिरुपळ्ळियेळ्ळुच्चि के व्याख्यान की अवतारिका में आल्वार के पाशुरों द्वारा ही उनकी वैभवता को प्रकाशित करते है। भगवान के दिव्य परिपूर्ण कृपा से जागृत आल्वार, स्वरूप ज्ञान प्राप्त कर, पेरियपेरुमाळ के पास जाते है। आपश्री यह पाते है कि भगवान आपश्री का स्वागत, कुशल क्षेम नहीं पूछते है, अपितु आँख बंध किये लेटे हुए है। इससे यह नहीं समझना चाहिए की भगवान को आळ्वार के ऊपर श्रद्धा नही है(संबंध रहित) क्योंकि आळ्वार और भगवान को एक दूजे के प्रति बहुत लगाव है। हम यह भी नहीं कह सकते की भगवान अस्वस्थता के कारण शयन किये हुए है क्योंकि इस प्रकार के दोष केवल भौतिक तत्त्व के अंग है, जो तमो गुण से परिपूर्ण है, लेकिन पेरियपेरुमाळ भौतिक तत्त्व से परे अलौकिक शुद्धसत्व है और इसमें कोई संशय नहीं है। पेरियपेरुमाळ शयन अवस्था में सोच रहे है की जैसे उन्होंने आळ्वार को सुधार कर निम्न गुणों से अनुग्रहित किया, उसी प्रकार कैसे संसारियों को सुधार कर अनुग्रह करें।

१. आल्वार कहते हैं ''आदलाल् पिरवि वेन्डेन्'' मतलब इस संसार में मैं पैदा होना नहीं चाहता हूँ- इससे यह साबित होता हैं की उन्हें यह ज्ञात हैं की प्रकृति संबन्ध एक जीवात्मा के लिए सही नहीं हैं।

२. आळ्वार को स्वरूप यथात्म्य ज्ञान (आत्मा का निजस्वरूप) अर्थात् भागवत शेषत्व का परिपूर्ण ज्ञान है क्योंकि वे कहते हैं ''पोनगम शेयद सेशम् तरुवरेल पुनिदम'' जिसका अर्थ हैं श्रीवैष्णव का शेषप्रासद ही श्रेष्ठमहाप्रसाद है।

३. इन्हें सांसारिक विषय भोग और आध्यात्मिक विषयों का भेद ज्ञान स्पष्ठ रूप से है क्योंकि वे कहते हैं ''इच्चुवै तविर अच्चुवै पेरिनुम वेण्डेन'' - यानि हैं मेरे लिए पेरिय पेरुमाळ के सिवा कोई भी वस्तु अनुभव के योग्य नहीं हैं।

४. आळ्वार कहते हैं ''कावलिल पुलनै वैत्तु'' अर्थात् अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण करना, इससे यह पता चलता हैं की उन्होंने इन्द्रियों को जीत कर अपने वश में रखा हैं।

५. आळ्वार कहते हैं ''मून्नु अनलै ओम्बुम कुरिकोल अणदंण्णमै तन्नै ओलित्तिट्टेन'' - अर्थात मैं कर्म योगादि मार्गों को त्याग दिया हूँ। इससे यह साबित होता हैं की आळ्वार ने (भगवान को पाने के लिए) संसार के अन्य उपायों का परित्याग किया हैं।

६. आळ्वार को उपाय यथात्म्य ज्ञान संपूर्ण रूप से है। यह विषय हमें उनकी बात ''उन अरुल एन्नुम आचै तन्नाल पोय्यनेन वन्दुणिंदेन'' अर्थात मैं यहाँ केवल आपके दया को उपाय मानकर पूरी तरह से निर्भर होकर आया हूँ।

अन्त में आचार्य पेरियवाच्छान पिळ्ळै कहते हैं आळ्वार के इन विशेष गुणों के कारण वे पेरियपेरुमाल को अत्यन्त प्रिय है जैसे बताते हैं ''वालुम शोम्बरै उगत्ति पोलुम'' अर्थात जो भगवान को पूरि तरह शरणागति करते है वे भगवान के अत्यन्त प्रीति का पात्र है।

आळ्वार की वैभवता को जानने के बाद हम उनका दिव्य चरित्र जानने के लिए प्रयत्न करेंगे।

उनके जन्म काल में श्रीरंगनाथ भगवान के दिव्य आशीर्वाद से आळ्वार शुद्धसत्व गुणों से ''विप्रनारायण'' नाम से जन्म लेते हैं। कालानुगुण किये जाने वाले पूरे संस्कार (चौलम्, उपनयनादि) प्राप्त करते हैं और पूर्ण वेद वेदांग का अर्थ सहित अध्ययन करते हैं। ज्ञानवैराग्य संपन्न विप्रनारायण श्रीरंगम् पहुँचकर श्रीरंगनाथ भगवान की पूजा करते हैं। उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर श्रीरंगनाथ भगवान अपना दिव्य मंगल सौन्दर्य दर्शन का अनुग्रह करके उनकी भक्ति को बढ़ाते हैं और श्रीरंगम् में ही आपश्री के नित्यनिवास की व्यवस्था करते हैं।

कैंकर्य पण्डित जैसे पुण्डरीक (उत्तम भक्त), मालाकार (मथुरा में श्रीकृष्ण और बलराम को पुष्पमाला बनाकर समर्पित करते थे), गजेन्द्र और श्रीविष्णुचित्त स्वामीजी (पेरियाळ्वार आठ फूलों से सुन्दर माला बनाकर एम्पेरुमान को अलंकरण करते थे) के पद छाया को अनुसरित विप्रनारायण एक सुन्दर नन्दनवन का निर्माण कर प्रतिदिन पुष्पमाला बनाकर श्रीरंगनाथ भगवान को अर्पण करते थे।

एक दिन तिरुकरम्बनूर गाँव वाली देवदेवि नामक वेश्या उरैयूर से अपने गाँव को लौटते समय सुन्दर पुष्पों से और पक्षियों से भरे हुए उन बगीचे को देखकर आश्चर्य चकित होकर नन्दनवन आ पहुँचती हैं। उस समय में देवदेवि, सुन्दर मुखी, सर पर लंबे सुन्दर केश, सुन्दर वस्त्र पहने, तुलसी और पद्ममाला से अलंकृत, द्वादश ऊर्ध्वपुण्ड्र से तेजोमय, पौधों को पानी देनेवाले उपकरण को हाथों में लिए हुए विप्रनारयण को देखती हैं। विप्रनारायण कैंकर्य में निमग्न रहते हैं और उनकी दृष्टि उस वेश्या पर नहीं आती हैं। तब देवदेवि अपनि सहेलियों से पूछती हैं की ''यह मनुष्य पागल हैं या अपुरुष है जो अपने सामने खडि सौन्दर्यराशी को देख नही रहा हैं''। सहेलियाँ जवाब देती हैं की वे विप्रनारायण हैं, भगवान श्रीरंगनाथ का कैंकर्य करते हैं और उनकी सुन्दरता की ओर नही देखेंगे। सहेलियाँ देवदेवि को चुनौती देते हैं की यदि विप्रनारायण को छः महीनों में देवदेवी अपनी तरफ मोड लेती हैं तब वे मानेंगे की वह लोकोत्तर सौन्दर्य राशी है और छः महीने उनकी दासि बन जाएँगी। उस चुनौती को स्वीकार करके देवदेवि अपने आभरण सहेलियों को देकर एक सात्विक रूप ले लेती हैं।

देवदेवि विप्रनारायण के पास जाकर उन्हें प्रणाम करते हुए भगवान के अत्यंत आंतरंगिक सेवा में निमग्न हुए भागवत की शरण में अपने आप को पाने की इच्छा प्रकट करती हैं। आळ्वार से देवदेवि कहती हैं की वह आळ्वार भिक्षाटन पूर्ती करके लौट आने तक निरीक्षण करेंगी। विप्रनारायण उनकी विनती स्वीकार कर लेते हैं। तब से देवदेवि विप्रनारायण की सेवा करते हुए उनका शेषप्रसाद पाते कुछ समय बिताती हैं।

एक दिन देवदेवि बगीचे में काम करते समय बहुत बारिश होती हैं। तब देवदेवि गीले कपडों से विप्रनारायण के

आश्रम में प्रवेश करती हैं। विप्रनारायण पोंछ ने के लिए अपने ऊपर की वस्त्र को देते हैं। उस समय दोनों अग्नि और घी की तरह नजदीख हो जाते हैं। अगले दिन देवदेवि अपने आभरणों से अलंकृत होकर विप्रनारायण सामने आती हैं। उनकी सौंदर्य देखकर विप्रनारायण उस दिन से उनका दास बन जाते हैं और भगवान का कैंकर्य को भूल कर पूरी तरह से छोड देते हैं। देवदेवी विप्रनारायण के ऊपर कुछ समय तक अपना कपट प्रेम दिखाती हैं। उस प्यार को देख कर विप्रनारायण पूरी तरह से सेवक बन जाते हैं। देवदेवि विप्रनारायण की धन दौलत को हडप कर उन्हें बाहर निकाल देती हैं। विप्रनारायण उस दिन से देवदेवि की अनुमति के लिये उनकी आँगन में प्रतीक्षा करते हुए समय बिताने लगे। एक दिन भगवान श्रीरंगनाथ और मता श्रीरंगनायकि टहल रहे थे और उस समय विप्रनारायण को देख कर श्रीरंगनायकि अपने स्वामी से विचार करती हैं की वेश्या गृह इन्तजार करने वाला ये व्यक्ति कौन है। तब भगवान श्रीरंगनाथजी उत्तर देते हैं की ये उनका कैंकर्य करने वाला भक्त था लेकिन अब वेश्यालोल होकर एसे तडप रहा है। तब पुरुषकार रूपिणि माता श्रीरंगनायकि श्रीरंगनाथजी से पूछती हैं ''एक आंतरंगिक कैंकर्य करनेवाला भक्त विषयभोगों में डूब रहा हैं और वे उसे कैसे छोड रहे हैं। इनकी माया को दूर कर फिर से इन्हें अपने कैंकर्य में लगा दीजिये।'' भगवान श्रीरंगनाथ श्रीरंगनायकि की बात मान उन्हें सुधारने के लिये अपने तिरुवाराधन से एक स्वर्ण पात्र को लेकर अपना रूप बदल कर देवदेवि के घर जाकर उनके दरवाजा पर कटखटाते हैं। तब देवदेवि उनसे अपने बारे में पूछने से बताते हैं की वे विप्रनारायण के दास अळगिय मणवाळन हैं। विप्रनारायण ने आप के लिए ये स्वर्ण पात्र भेजा हैं। ये सुनकर देवदेवि आनन्द से विप्रनारायण को अंदर आने के लिए आज्ञा दे देती हैं अळगिय मणवाळन विप्रनारायण के पास जाकर देवदेवि की मंजूरी बताते हैं। विप्रनारायण देवदेवि के घर पहुँच कर फिर से विषयभोगों में डूब जाता हैं। पेरियपेरुमाळ अपने सन्निधि को लौट कर आदिशेष पर आनंद से लेट जाते हैं।

अगले दिन सन्निधि पूजारियों ने पूजा करने के द्रव्य में एक पात्र कम पाया और इस विषय को महाराज तक पहुँचाते हैं। महाराज पूजारियों की अश्रद्धता पर आग्रह करते हैं। एक सेविका कुएँ से पानी लाते समय, सुनती हैं की उनके रिश्तेदारों में एक रिश्तेदार को राजा के आग्रह का पात्र होना पड़ा हैं और इस कारण वह उन्हें बता देती हैं की विप्रनारायण ने देवदेवि को उपहार के रूप में एक स्वर्ण पात्र दिया हैं जिसे देवदेवि ने अपनी तकिया के नीछे रखा हैं। पूजारी ने महाराजा के सैनिकों को विषय की सूचना कि और तुरन्त कर्मचारियों ने देवदेवि के घर पहुँचकर पात्र खोज निकालते हैं। देवदेवि के साथ विप्रनारायण को निर्भन्ध कर देते हैं। राजा ने देवदेवि से पूछा ''कोई देता भी हैं तब भी भगवान का पात्र कैसे ले सकती हो।'' देवदेवि ने राजा से कहा ''मुझे यह नही मालूम की यह पात्र भगवान का है, विप्रनारायण ने इसे अपना पात्र कहकर अपने दास अळगिय मणवाळन के द्वारा भेजा हैं और इस कारण निसंकोच से स्वीकार किया हैं।'' ये सुनकर विप्रनारायण चोक कर कहते हैं ''न ही उनके कोई दास हैं और न ही कोई स्वर्ण पात्र उनके पास हैं।'' यह वाद-विवाद सुनकर राजा देवदेवि को जुरमाना डाल कर छोड देते हैं। पात्र को भगवान के सन्निधि में वापस कर देते हैं और विचारण पूरी होने तक विप्रनारायण को कारागृह में रखने के लिए आज्ञा दिये।

घटित संघटनों को देख कर माता श्रीरंगनायकि ने भगवान श्रीरंगनाथ से विप्रनारायण को अपने लीला की नहीं अपनी कृपा का पात्र बनाने की विनती करती हैं। भगवान श्रीरंगनाथ उनकी बात मान लेते हैं और उस दिन रात को महाराजा के सपने में साक्षात्कार होकर कहते हैं की विप्रनारायण मेरा अत्यंत आंतरंगिक कैंकर्य करने वाले भक्त है। विप्रनारायण के प्रारब्ध कर्म को मिटाने के लिए मुझसे रचि हुई यह रचना है। भगवान श्रीरंगनाथ महाराजा को आदेश करते हैं की विप्रनारायण को तुरन्त छोड़ दे और उन्हें उनकी पूर्व कैंकर्य में जुटाने की आज्ञा देते हैं। महाराज नीन्द से जाग उठते हैं और विप्रनारायण का वैभव जानकर उन्हें आज़ाद कर देते हैं और सपने का वृत्तान्त सभी को बता देते हैं। विप्रनारायण को

धन दौलत से गौरवान्वित करते हैं और घर भेज देते हैं। तब विप्रनारायण भगवान की महानता और उन्हें सुधार ने के लिए भगवान के प्रयास को महसूस करते हैं। इस सांसारिक भोगों को छोड देते हैं और भागवतों का श्रीपाद तीर्थ स्वीकार करते हैं। (भागवतों का श्रीपाद तीर्थ समस्त पापों का प्रायश्चित करता है)।

तत्पश्चात् विप्रनारायण तोंडरडिप्पोडि आळवार एवं भक्तांघ्रिरेणु के नामों से मशूर हुए। तोण्डर=भक्त, अडि/अंघ्रि= पाद पद्म, पोडि/रेणु= धूल। पूरा अर्थ है- भगवत भक्तों का पाद धूल। अन्य आळवार से अव्दितीय वैभवता इन आल्वार की हैं - केवल इन्हीं के नाम में भागवत शेषत्व का प्रकाश होता हैं। जैसे तिरुवडि (हनुमान/गरुड), इळय पेरुमाळ (लक्ष्मण) एवं शठकोप ने भगवान के अलाव किसी भी अन्य विषय को मूल्यवान नहीं माना वैसे ही तोन्डरडिप्पोडि आळवार भी कहते हैं ''इन्दिर लोकं आलुं अच्चुवै पेरिनुं वेंडेन'' अर्थात् मुझे श्रीवैकुण्ठ के बारे में सोचने की भी इच्छा नहीं हैं मुझे केवल श्रीरंग क्षेत्र में पेरियपेरुमाळ का अनुभव चाहिए। पेरियपेरुमाळ के कृपा से ही उनमें बद्लाव आने के कारण, आळवार उनके आभारी हो चुके थे और इसी कारण अन्य आळवारों की तरह दिव्यदेशों में विराजमान अर्चामूर्तियों के बारे में प्रबन्ध गाने से भिन्न केवल पेरियपेरुमाळ को ही अपना प्रबन्ध समर्पित किया हैं। आळवार के अटूट विश्वास और पेरुमाळ पर वात्सल्य को देखकर पेरियपेरुमाळ भी उस प्यार का प्रति फल चुकाते हुए उन्हें परिपूर्ण ज्ञान से अनुग्रह करते हैं और अपना पर्वतादिपंचक (एम्पेरुमान के पाँच निवास क्षेत्र) में स्थित विविध नाम, रूप, दिव्य लीलाओं को श्रीरंगम् से ही आळवार को दर्शन कराते हैं। देवदेवि भी आळवार की भक्ति और ज्ञान को देख कर अपना पूर्ण धन भगवदर्पित करके सेवा निरत हो जाती हैं।

पर भक्ति, पर ज्ञान और परम भक्ति में डुबे और अपना सर्वस्व पेरियपेरुमाळ को मान आळवार तिरुमंत्र अनुसंधान और नाम संकीर्तन से पेरियपेरुमाळ को निरन्तर अनुभव करते थे। अपने दिव्य अवस्था का अनुभव करते हुए, आल्वार घोषित करते हैं की यमराज को देखकर श्रीवैष्णव को कंपित होने की आवश्यकता नहीं हैं। आल्वार कहते हैं की यमराज के दूत श्रीवैष्णव के तिरुवडि पाने के लिए काँक्षित होते हैं और एक श्रीवैष्णव दूसरे श्रीवैष्णव के श्रीपाद पद्मों को पूजनीय मानते हैं। जैसे सौनका ऋषि ने सदानन्दर को एम्पेरुमान के दिव्य नामों की वैभवता समझाई हैं उसी तरह आळवार पेरियपेरुमाळ के सामने तिरुमालै गान करते हैं। जैसे श्रीशठकोप स्वामीजी अचित तत्त्व के दोषों को पहचानते हैं (२४ तत्त्व - मूल प्रकृति, महान, अहंकारम, मनस, पाँच ज्ञान-इन्द्रिय, पाँच कर्म-इन्द्रिय, पाँच तनमात्र, पाँच भूत), आळवार भी अचित तत्त्व स्पष्ट रूप से पहचानते हैं जैसे ''पुरम सुवर ओट्टै माडम'' अर्थ यह शरीर केवल बाहर का दीवार हैं और आत्मा ही अन्दर निवास करती हैं और नियंत्रक हैं। आळवार प्रतिपादित करते हैं की जीवात्मा का स्वरूप एम्पेरुमान के भक्तों का सेवक होना हैं और यह विषय ''अडियारोरक्कु'' में बताते हैं अर्थ जीवात्म भागवतों का सेवक हैं। तिरुमंत्र के निष्ठा से परिपूर्ण आळवार ''मेम्पोरुळ'' पाशुर में प्रकट करते हैं जो केवल एम्पेरुमान ही उपाय हैं जो तिरुमालै प्रबन्ध का सार हैं। ''मेम्पोरुळ'' पाशुर के अगले पाशुरों में ऐलान करते हैं की भागवत सेवा ही श्रीवैष्णव का अंतिम लक्ष्य हैं और उनके तिरुपळ्ळियेळुच्चि के अंतिम पाशुर में एम्पेरुमान से विनंती करते हैं ''उंनडियार्क्काटपडुताय'' जिसका अर्थ हैं मुझे आपके भक्तों का अनुसेवी बना दीजिये। इस तरह आळवार इन महान सिद्धान्तों को पूरे संसार की उन्नती की आकांक्षा से अपने दो दिव्यप्रबन्ध ''तिरुमालै'' और ''तिरुपळ्ळियेळुचि'' से समर्पण किया हैं।

तनियन

तमेव मत्वा परवासुदेवं रन्गेसयं राजवदर्हणियम्।
प्राभोद्कीं योक्रुत सूक्तिमालां भक्तान्घ्रिरेणुं भगवन्तमीडे।।
कोदंडज्येष्ठानक्षत्रे मन्डंगुडिपुरोभ्दवम्।
चोलोव्र्या वनमालांशं भक्तांघ्रिरेणुमाश्रये।।

ॐ नमो वेंकटेशाय

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

गोविंदम्...
परमानंदम्...

तिरुमल
श्री वेंकटेश्वरस्वामी के
मंदिर में संपन्न
नित्य सेवाएँ

गोविंदम्... परमानंदम्...

तिरुमल श्री वेंकटेश्वरस्वामी के मंदिर में संपन्न नित्य सेवाएँ

(ति.ति.दे. के नमूना मंदिर के अनुसार)

सुप्रभात

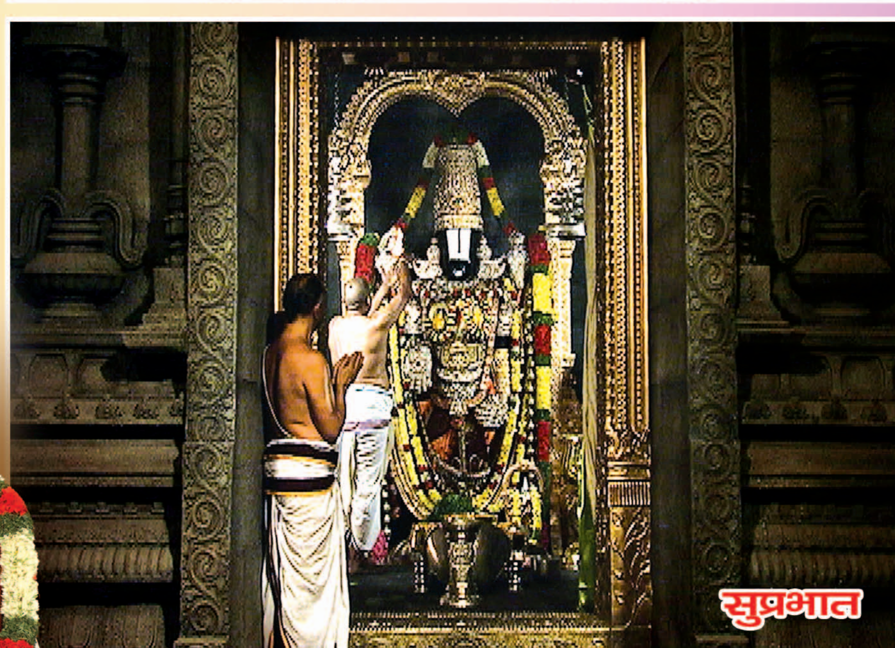

सुप्रभात

नित्यकल्याण उत्सवमूर्तियाँ

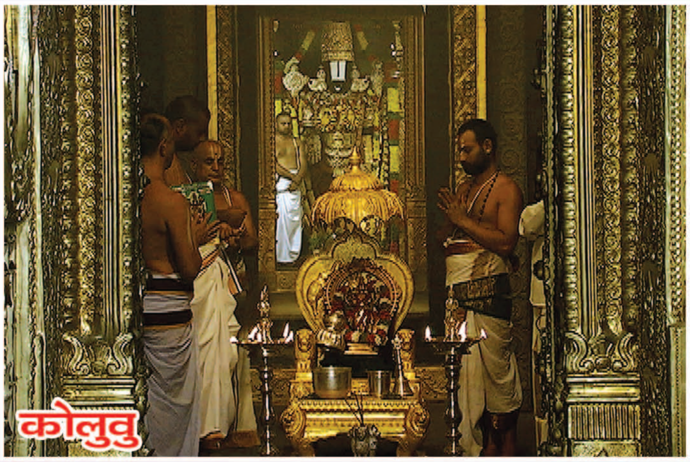
कोलुवु

तोमालसेवा

सहस्त्र कलशाभिषेक

तिरुप्पावडा सेवा

अष्टदलपादपद्माराधना

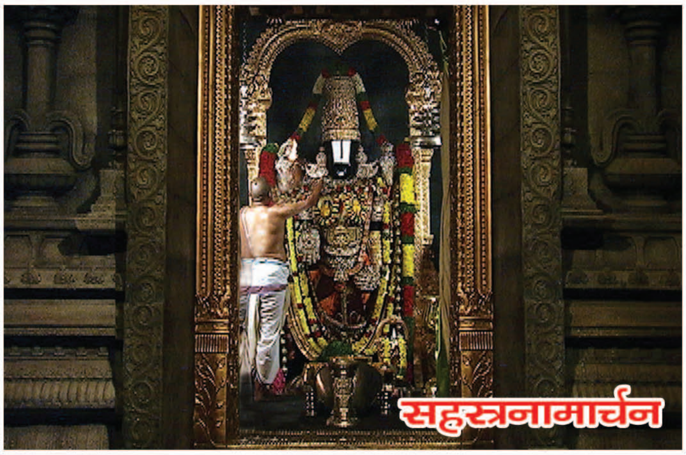
सहस्त्रनामार्चन

अभिषेक

एकांत सेवा

तिरुमल में दि. ०९-११-२०१९ के प्रातःकाल संपन्न हुआ कैशिक द्वादशी महोत्सव

२०१९, अक्तूबर २३ से २५वीं तारीख तक (आं.प्र., चित्तूर जिला) चंद्रगिरि प्रांत में स्थित श्री कोदंडरामस्वामी मंदिर में संपन्न अष्टबंधन, बालालय जीर्णोद्धरण, महासंप्रोक्षण के दृश्य।

२०१९, नवंबर ०७ से १०वीं दिनांक तक संपन्न (आं.प्र.) देवुनी कडपा प्रांत में स्थित श्री लक्ष्मी वेंकटेश्वरस्वामी मंदिर में संपन्न अष्टबंधन महासंप्रोक्षण के दृश्य।

तिरुमल श्री बालाजी मंदिर में ति.ति.दे. पदेन सदस्य के रूप में आं.प्र. धर्मस्व शाखा के सचीव श्रीमती वेमूरि उषारानी, आई.ए.एस., से (१०-११-२०१९) ति.ति.दे. के अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री ए.वी.धर्मारेड्डी जी ने शपथ ग्रहण करवाया। तदनंतर चित्रपठ और तीर्थप्रसादों का समर्पण किया।

ति.ति.दे. बर्ड अस्पताल के प्रांगण में दिव्यांग और उनके सहायकों के बीच दिवाली त्यौहार मनाते हुए ति.ति.दे. के संयुक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री पी.बसंत् कुमार, आई.ए.एस.

श्री कूर नारायण जीयर

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. २५ दिसंबर २०१९

- श्री अनुज कुमार अगर्वाल
मोबाइल - ८१२३६०५६९४

जन्म नक्षत्र - मृगशीर्ष, ज्येष्ठा नक्षत्र

अवतार स्थान - श्रीरंगम्

आचार्य - श्री कूरेश स्वामीजी, श्री पराशर भट्टर स्वामीजी

परमपद प्राप्त स्थान - श्रीरंगम्

रचनाएँ - सुदर्शन शतक, स्तोत्र रत्न व्याख्यान, श्रीसूक्त भाष्य, उपनिषद् भाष्य, नित्य ग्रंथ (तिरुवाराधनं) आदि

शिष्य - चेमं जीयर, तिरुक्कुरुगैप् पिरान जीयर, सुंदर पाण्डिय देवन् आदि

उनका जन्म श्रीरंगम् में मृगशीर्ष, ज्येष्ठा नक्षत्र में सिरीय गोविन्द पेरुमाल (श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी के भ्राता) के यहाँ हुआ था। सन्यास ग्रहण करने के बाद वे कूर नारायण जीयर, नलं थिगल नारायण जीयर, नारायण मुनि, पेरिय जीयर और श्रीरंग नारायण जीयर आदि के नाम से ज्ञात हुए।

सन्यासाश्रम ग्रहण करने से पहले उनके ''एदुत्त कै अलगिय नायनार'' नाम एक पुत्र था। वे पहले श्री कूरेश स्वामीजी के शिष्य हुए और तत्पश्चात में वे आल्वान के पुत्र श्री पराशरभट्टर स्वामीजी के शिष्य हुए और उनसे भी शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने श्रीरंगम् मंदिर में बहुत से बाह्य कैंकर्य संपन्न किये जैसे पार्थसारथी सन्निधि, गरुडाल्वार सन्निधि आदि का निर्माण और पेरिय पेरुमाल के लिए आंतरिक/गोपनीय कैंकर्य।

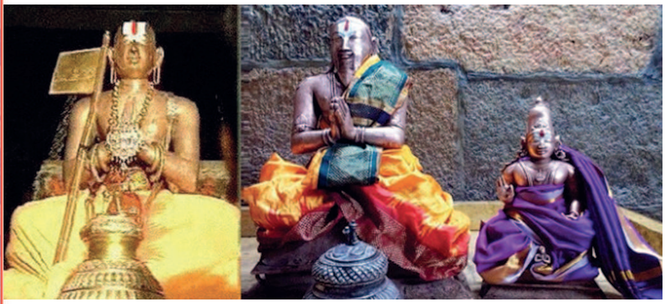

श्रीरामानुजस्वामीजी, श्रीकुरेश स्वामीजी, श्रीपराशरभट्टर स्वामीजी

वेदांताचार्य जो कूर नारायण जीयर के बहुत समय बाद अवतरित हुए, उन्होंने अपनी रचनाओं में उन्हें पेरिय जीयर नाम से संबोधित किया है **नोट -** ऐसा माना जाता है कि वहाँ एक और कूर नारायण जीयर रहते थे, जिनका जन्म वेदांताचार्य के कुछ समय के बाद हुआ। वेदांताचार्य अपने स्तोत्र व्याख्यान में (जीयर के स्तोत्र व्याख्यान का उल्लेख करते हैं। उन्होंने जीयर के श्रीसूक्त भाष्य और नित्य ग्रंथ का उल्लेख भी अपने रहस्य त्रय सार में किया है। क्योंकी कूर नारायण जीयर श्री कुरेश स्वामीजी के शिष्य थे तो उन्हें श्री वेदांत देशिक स्वामीजी से आयु में अधिक होना चाहिए इसलिए - श्री वेदांत देशिक स्वामीजी और कूर नारायण जीयर की अलग पहचान करने के लिए वेदांताचार्य ने उन्हें पेरिय जीयर कहकर (बड़े) संबोधित किया होगा।

श्री वरवरमुनि स्वामीजी ने अपने ईडु प्रमाण संग्रह ''(नम्पिल्लै के ईडु महा व्याख्यान के लिए प्रमाणों का संकलन में कूर नारायण जीयर के उपनिषद भाष्य का उल्लेख किया है।)'' श्री वरवरमुनि स्वामीजी ने उनकी महिमा ''शुद्ध संप्रदाय निष्ठावान'' (वह जिन्हें हमारे संप्रदाय में शुद्ध निष्ठा है के रूप में की है।) कूर नारायण जीयर को सुदर्शन उपासक के रूप में भी जाना जाता है। एक बार श्री कुरेश स्वामीजी जीयर से कहते है ''हमारा जन्म श्रीवैष्णव परिवार में हुआ, जहाँ उपासना में प्रवत्त

श्री तिरुवरंगप्पेरुमाल अरयर

होना अनुचित माना जाता है - उपासना जैसे स्व-प्रयासों में प्रवत्त होने के बजाय हमें पूर्ण रूप से भगवान के श्रीचरणों के अधीन होना चाहिए''। जीयर कहते है ''मेरी उपासना मेरे लाभ के लिए नहीं है। वह एक मात्र भगवान और भागवतों की सेवा के लिए है''। जीयर के जीवन के बहुत सारे द्रष्टांत उनके इस सिद्धांत को दर्शाते हैं।

१) पुराने समय में श्रीरंगनाथ भगवान, कावेरी नदी में तेप्पोत्सव (नौका पर्व) का आनंद लिया करते थे। एक बात ऐसे उत्सव में, अचानक बाड़ आ जाती है और तेप्पम (नौका) उस बाड़ के पानी के साथ दूर तक बह जाती है। परन्तु जीयर अपनी उपासना शक्ति के प्रयोग से नौका को बहने से रोक देते हैं और उन्हें सुरक्षा से नदी के किनारों पर ले आते है। यह सब देखकर, वे कैंकर्यपरारों को श्रीरंगम् शहर में ही एक बड़े तालाब का निर्माण करने

नौका में नाचियार के साथ नम्पेरुमाल

का निर्देश देते हैं और व्यवस्था करते हैं कि उसके बाद से तेप्पोत्सव सुरक्षित रूप से मनाया जाये।

२) एक बार तिरुवरंगप्पेरुमाल अरैयर किसी रोग से ग्रसित हो जाते हैं, जो पेरिय पेरुमाल के प्रति उनके कैंकर्य को प्रभावित करते हैं। उस समय, कूर नारायण जीयर, सुदर्शन शतक की रचना कर, उसे गा कर सुनाते हैं और अरयर को उस रोग से मुक्ति दिलाते हैं। यह बात सुदर्शन शतक की तनियन में स्पष्टता से दर्शायी गयी है। श्रीरामानुजस्वामीजी के समय के तुरंत बाद, श्रीरंगम् के श्रीरामानुजस्वामीजी के मठ का कार्य-भार कूर नारायण जीयर को दिया गया। इस मठ का नाम ''श्रीरंग नारायण जीयर मठ'' हुआ और अनेकों जीयर स्वामी ने इस पद की प्रतिष्ठा को जारी रखा और श्रीरंगम् मंदिर कैंकर्य में सहयोग किया। इस तरह हम ने कूर नारायण जीयर के गौरवशाली जीवन की कुछ झलक देखी। हम सब उनके श्रीचरण कमलों में प्रार्थना करते हैं कि हम दासों को भी उनकी अंश मात्र भगवत/भागवत/ आचार्य कैंकर्य प्राप्त हो।

कूर नारायण जीयर की तनियन

श्रीपराशर भट्टार्य शिष्यं श्रीरंगपालकं। नारायण मुनिं वन्दे ज्ञानादि गुणसागरं।।

मैं, श्री नारायण मुनि को प्रणाम करता हूँ, जो श्री पराशर भट्टर के शिष्य हैं, जो श्रीरंगम् की रक्षा करते हैं और जो ज्ञान, भक्ति, वैराग्य आदि के सागर हैं।

श्री अळगिय मनवाळ पेरुमाळ् नायनार्

- श्री गोविंद मधुसूदन रांदड
मोबाइल - ०८३५७२५०२०९

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. ३० दिसंबर २०१९

तिरुनक्षत्र - मार्गशीर्ष मास, धनिष्ठा नक्षत्र

अवतार स्थल - श्रीरंगम्

आचार्य - वडक्कू तिरुविधि पिल्लै

परमपद प्राप्त स्थान - श्रीरंगम्

रचनाएँ - तिरुप्पावै ६००० पद व्याख्यान, कण्णिनुण् शिरुताम्बु व्याख्यान, अमलनाधिपिरान व्याख्यान, दिव्यप्रबन्ध रहस्य (आल्वार के शब्दों के आधार पर रहस्य त्रय का व्याख्यान) आचार्य हृदयं, पट्टोलै (आचार्य हृदयं के लिए उनके स्वयं का व्याख्यान जो अब प्राप्त नहीं है) आदि।

अळगिय मनवाळ पेरुमाळ् नायनार् का जन्म श्रीरंगम् में वडक्कू तिरुविधि पिल्लै के यहाँ श्रीरंगनाथ भगवान की कृपा से हुआ। वे और उनके अग्रज श्री पिल्लै लोकाचार्य स्वामीजी श्रीरंगम् में ऐसे बडे हुए जैसे अयोध्या में श्रीराम् और श्रीलक्ष्मण और गोकुल में श्रीकृष्ण और श्रीबलराम। उन दोनों को एक ही समय में संप्रदाय के महान आचार्यो जैसे श्री कलिवैरिदास स्वामीजी, पेरियवाच्चान पिल्लै, वडक्कू तिरुविधि पिल्लै आदि की कृपा कटाक्ष और मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। उन्होंने संप्रदाय अपने पिता वडक्कू तिरुविधि पिल्लै के चरण कमलों में सीखा। इन दोनों आचार्यों का एक विशेष गुण यह है कि उन्होंने नैष्टिक बह्मचर्य का व्रत लिया था और जीवन पर्यंत उसका पालन किया।

श्री वरवरमुनि स्वामीजी ने अपने उपदेश रत्ना माला के ४७वें पाशुर में नायनार् और उनके योगदान की महिमा का वर्णन किया है।

नम्पियर चेय्त व्याक्कियैगल् नालिरण्डुक्कु
एनचामै यावैक्कुम इल्लैये
तम् सीराल वैयगुरुविन तम्बी मन्नू मणवाळमुनि
चेय्युमवै तामुम चिल

सामान्य शब्दार्थ

दिव्यप्रबन्ध के कुछ प्रबंधों के लिए श्री वेदांती स्वामीजी ने व्याख्यान किया था (श्री पेरियवाच्चान पिल्लै से भी पहले)। श्री पेरियवाच्चान पिल्लै के बाद दिव्यप्रबन्ध के कुछ प्रबंधों के लिए व्याख्यान अळगिय मनवाळ पेरुमाळ् नायनार् ने भी लिखा था, जो सभी दिव्य गुणों से पूर्ण थे और श्री पिल्लै लोकाचार्य स्वामीजी के प्रिय अनुज थे।

व्याख्यान में पिल्लै लोकम् जीयर ने नायनार् की महिमा का वर्णन किया है।

१) ''थम् चीर'' पाशुर के लिए व्याख्यान में वे नायनार् का एक विशेष गुण दर्शाते हैं। वे बताते हैं कि दिव्यप्रबन्ध में नायनार् की योग्यता अन्य आचार्यों से कही अधिक है। इसे ''आचार्य हृदयं'' का अध्यन करके समझा जा सकता है, जो पूरी तरह से दिव्यप्रबन्ध के शब्दों का उपयोग करके बनाया गया है (साथ ही इतिहास और पुराणों से भी कुछ शब्दों को लिया गया है)।

२) ''वैय गुरुविन तम्बी'' में यह दर्शाया गया है कि नायनार् की महानता श्री पिल्लै लोकाचार्य स्वामीजी के अनुज के रूप में जन्म लेने से है। वे ''जगत् गुरुवरानुज'' (जगत् गुरु श्री पिल्लै लोकाचार्य स्वामीजी के अनुज) के रूप में लोकप्रिय है।

जब की नायनार् तिरुप्पावै, कण्णिनुण् शिरुताम्बु, अमलनाधिपिरान आदि के लिए व्याख्यान किये हैं, जो सभी आनंददायक है, पर उनकी श्रेष्ठ कृति आचार्य हृदयं है।

उनके व्याख्यान/रचनाएँ

१) उनके तिरुप्पावै ६००० पद का व्याख्यान बहुत ही विस्तृत और बहुत सुंदर है। इस व्याख्यान में, हमारे संप्रदाय के सार का सुंदरता से प्रदर्शन प्रतिपादन किया गया है। नायनार ने अपने तिरुप्पावै व्याख्यान में भगवान के उपायात्वं/उपेयत्वं, भगवान की निर्हेतुक कृपा, अम्माजी का पुरुष्कार, परगत स्वीकारं, कैंकर्य विरोधी आदि सिद्धांतों को बडी उत्कृष्टता से समझाया है।

२) उनके द्वारा दिया गया अमलनाधिपिरान व्याख्यान हमारे संप्रदाय की श्रेष्ठ कृतियों में से एक है। उसमें वे बहुत सुंदरता से भगवान के दिव्य रूप के अनुभव और सिद्धांत का समागम की व्याख्यान करते हैं।

३) उनके कण्णिनुण् शिरुताम्बु व्याख्यान में पंचमोपाय (आचार्यचरणों को ही अपना सर्वस्व स्वीकार करना) और आचार्य कैंकर्य की महिमा को बहुत ही सुंदरता से दर्शाया गया है।

४) उनकी दिव्यप्रबन्ध रहस्य, रहस्य त्रय - तिरुमंत्र, द्वायमंत्र और चरमश्लोक के अर्थ को दिव्यप्रबन्ध के शब्दों द्वारा बहुत सुंदरता से समझाया है। यह उन श्रेष्ठ रचनाओं में से एक है जिसे दिव्यप्रबन्ध के विशेषज्ञ पसंद करते हैं।

५) अंततः, आचार्य हृदयं, उनकी सर्वश्रेष्ठ कृति, श्री शठकोप स्वामीजी और उनके श्रीसहस्रगीति दिव्यप्रबंध की सटीक भावनाओं को प्रदर्शित करती है। यह ग्रंथ, श्री वचनभूषण दिव्यशास्त्र (श्री पिळ्ळै लोकाचार्य स्वामीजी द्वारा कृत) में दर्शाए गए सिद्धांतों को और विस्तार में समझाता है।

किसी की महानता को समझने के लिए, किसी अन्य महानुभाव के द्वारा उनके विषय में कहे हुए शब्दों को देखना चाहिए। नायनार् ने अत्यंत अल्प आयु में अपना शरीर त्यागने का निर्णय लिया और श्री पिळ्ळै लोकाचार्य स्वामीजी को यहाँ छोडकर परमपद की ओर प्रस्थान किया। दुःख के सागर में गिरे हुए श्री पिळ्ळै लोकाचार्य स्वामीजी नायनार् के मस्तक को अपनी गोद में रखकर रोते हुए कहते हैं :

मामुदुम्बईमन्नू मणवाल अण्णलोडू
चेममुदन वैकुण्ठं सेंद्रक्काल
मामेनरु थोट्टूरैत्त चोल्लुम तुयम थन्निनाल पोरुलुम
एळुतुम् इनग्गुरैप्पारार्

सामान्य शब्दार्थ

सभी वैभवों से नायनार् के परमपद गमन के पश्चात, यहाँ कौन है जो रहस्य त्रय - तिरुमंत्र, द्वायमंत्र और चरमश्लोक (जहाँ भगवान अपने हृदय पर हाथ रखकर कहते हैं ''माम्'' मैं रक्षक हूँ) के अर्थ को समझाएगा।

नायनार् की ऐसी महिमा थी कि स्वयं श्री पिळ्ळै लोकाचार्य स्वामीजी उनकी महिमा का वर्णन करते हैं। हम भी अळगिय मनवाळ पेरुमाळ् नायनार् के चरण कमलों में प्रार्थना करें कि हम भी उनके समान भगवान और अपने आचार्य के प्रति ऐसी निष्ठा प्राप्त करें।

अळगिय मनवाळ पेरुमाळ् नायनार् की तनियन

द्राविडाम्नाय हृदयं गुरुपर्वक्रमागतम्
रम्यजामात्रुदेवेन दर्शितं कृष्णसूनूना

अळगिय मनवाळ पेरुमाळ् नायनार् का मंगलाशासन (जो प्रायः आचार्य हृदयं के बाद गाया जाता है) :

तन्तरुळवेणुम् तवत्तोर् तवप्पयानाय
वनत मुदुम्बै मणवाल - चिंतैयिनाल्
नीयुरैत्त मारन निनैविन पोरुलनैत्तेन्
वायुरैत्तु वाळुम् वगै

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

शरणागति मीमांसा

(पंचम खण्ड)

सियाराम ही उपेय

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि तापडिया
मोबाइल - ९४४९५१७८७९

९२

श्रीमते रामानुजाय नमः

इसका सारांश यह हुआ कि जिसमें अहंकार आयेगा उसका आत्मा बिलकुल विमूढ हो जायगा याने उसका स्वरूप नष्ट हो जायगा। जैसे भंग के नशा में मनुष्य विचार शून्य हो जाता है, उसी तरह अहंकार आने पर मनुष्य विपरीत ज्ञानवाला हो जाता है। उसका ज्ञान ठिकाने नहीं रह जाता। यहाँ तक हो जाता है कि खुद अपने ही को प्रधानकर्त्ता मानने लगता है। भगवान के कर्तृत्व को अपने ऊपर किये हुए भगवान के अनेक उपकारों को बिलकुल भूल जाता है। इससे सच्चे मुमुक्षु लोग तो अहंकार रूप शत्रु से बहुत भयभीत होकर रहते हैं। जो बद्ध संसारी लोग हैं वे रात दिन अहंकार ही में पड़े रहते हैं, न उन लोगों को नित्य अनित्य का ज्ञान रहता है। इसी कारण उनमें अज्ञान की मात्रा बहुत अधिक रहती है। यही लोग मिथ्याभिमान में चूर रहते हैं। मैं बहुत विद्वान हूँ, मेरी बराबरी कौन कर सकता है मैं जिसको चाहता हूँ उसको परास्त कर देता हूँ। मेरी सबसे ऊँची जाति है। बड़े आदमियों में हमारा बहुत मान है। मैं बहुत कुटुम्ब वाला हूँ। हमारे सहायक भी बहुत हैं, सबसे ऊँचा आसन हमारा रहता है मैं बहुत रूपवान हूँ। द्रव्य भी मेरे पास बहुत है। महल मकान अधिकार भी हमको काफी मिला है। हमारा शरीर भी अच्छा हृष्ट पुष्ट है। मैं जो चाहता हूँ सो कर लेता हूँ। मान मर्यादा भोजनादि में मैं सब से पहले पूछा जाता हूँ। हर वक्त दस आदमी हमारे पास रहा करते हैं। सैकड़ों लोग मुझसे मिलने सदा आया जाया करते हैं। मेरे बराबर भाग्यवान कौन हो सकता है। आचार विचार भी हममें सबसे ज्यादा है। दस लोग सदा हमें आदर की दृष्टि से देखा करते हैं। अनेकों मनुष्य हमें प्रणाम किया करते हैं मैं सदा पवित्र रहता हूँ। हमारे समान महात्मा भी कौन हो सकता है। आसन सिद्धि भी हमें प्राप्त ही है। सबसे पहले हरेक बात में मैं ही पूछा जाता हूँ। अब तो संसार को मैं जीत लिया हूँ। माया से मैं दूर हो गया हूँ। अनुभव में भी हमारे बराबर कोई नहीं। महात्माओं में भी हमारे बराबर कोई एकान्ती नजर नहीं आता है। बाकी लोग तो संसार में पड़े हुए हैं। मैं तो जीवन मुक्त हूँ। हमारे समान शास्त्र विषय को भी दूसरा कोई समझने वाला नहीं है। मैं तो सबसे उच्च कुल वाला हूँ। दुनियाँ में आकर जो कुछ मिलना चाहिए वह सब हमें मिल चुका है। ब्राह्मणों में भी हमारा पहला नंबर है। विद्या, रूप, धन, मान, मर्यादा आदि में भी मैं सब से श्रेष्ठ हूँ। श्रीदेवराज गुरु कहते हैं कि हे महात्माओं! जो सत्संगहीन, स्वरूप ज्ञान से रहित, अज्ञान से भरे हुए, बारम्बार संसार चक्र में आने जाने वाले अभागे बद्ध संसारी लोग हैं, वे ही त्रिदोष में पड़े हुए मनुष्यों के

समान इस तरह पूर्वोक्त प्रकार से अहंकार में पड़े रहते हैं। ऐसे अहंकारी लोगों से सच्चे मुमुक्षु महात्मा कोसों दूर रहते हैं। और उत्तम जाति, विशेष ऐश्वर्य, भरपूर विद्या लोकोत्तर रूप, सर्व प्रकार से मान मर्यादा, आचार-विचार अनुष्ठान आदि से पूर्ण होते हुए भी सच्चे मुमुक्षु स्वप्न में भी अहंकार नहीं करते हैं। न तो इन चीजों के द्वारा उनके आत्मा में शांति ही प्राप्त होती है, और न इन पूर्वोक्त अनित्य चीजों को पाकर अपने को कभी भाग्यवान ही मानते हैं। सद्गुरुओं के कृपा पात्र चिरकाल तक सत्संग किये हुए सच्चे मुमुक्षु लोग तो यह सोचा करते हैं कि हाय भगवान! मनुष्य देह पाकर हमें मिला ही क्या है। ये जितनी चीजें हमें मिली हैं इनमें एक भी आत्मा की साथी नहीं है। जब मैं अपनी माँ के गर्भ में था उस समय ये कोई भी चीजें हमारे साथ न थीं और अभी यदि प्राण रूप पखेरू इस शरीर रूपी पिंजड़े से निकलकर चल दे, तो इनमें एक भी कोई आत्मा के साथ नहीं चलने वाला है। अभी यदि आत्मा निकल जाय तो यह कुल, यह जाति, यह कुटुम्ब, यह साथी, यह विद्या, यह धन, यह मान-मर्यादा, ये सदा मिलने जुलने वाले कोई भी इस आत्मा के साथ चलने वाले नहीं हैं। मनुष्य देह पाने का प्रधान फल तो भगवान की प्राप्ति है। उसमें भी इन नेत्रों के सामने भगवान का साक्षात् दर्शन हो, नित्य भगवान से मिलना होवे, साक्षात् भगवान की सेवा बने, इस आत्मा का सर्वस्व धन जो भगवान का चरणारविन्द है, वह साक्षात् दृष्टिगोचर हो, तभी तो इस मनुष्य का मनुष्य जन्म लेना पूर्ण रूप से सफल है। जैसे बड़ों का वचन है कि-

''धनं मदीयं तव पाद पंकजं कदानु साक्षात्करवाणि चक्षुषा।''

''इसका अर्थ यह हुआ कि हे भगवान! वासुदेव हमारा असल धन जो आपका चरण कमल है वह इन नेत्रों के सामने मन के मुताबिक अपनी इच्छानुसार साक्षात् मैं देखूँ वा करूँ।'' बड़ों के इस दिव्य मनोरथ के मुताबिक जो भगवान के श्रीचरणारविन्द का साक्षात् दर्शन है सो तो हमें अभी स्वप्न में भी नहीं हुआ है। फिर दुनियाँ में मनुष्य देह पाने का लाभ ही क्या हुआ। यह शरीर, यह जाति, यह धन, यह विद्या, यह ऐश्वर्य, यह मान मर्यादा सभी तो अनित्य ही है। जन्म के बाद ही मिला है, मरण के दिन हीं छूट जाने वाले हैं। जो परवश बिना इच्छा के भी काल के द्वारा जबर्दस्ती छूट जानेवाला है, उसके लिए क्या व्यर्थ अहंकार करें। अभी हमारे पास अहंकार करने की सामग्री ही क्या है। शुद्ध हृदय वाले तो हमें महात्मा हीं कहते हैं। भजनानन्दी हीं बताते हैं। हमें भारी विद्वान के जैसा समझते हैं। पवित्र अनुष्ठानी वैराग्यवान्, इन्द्रियजित भगवान का प्रेमी एकान्ती मानते हैं। परन्तु ये बातें हम में सचमुच होती तो मनुष्य देह का प्रधान फल जो परमात्मा का साक्षात्कार है सो क्यों नहीं होता। हे हरे! अन्य जीवों की अपेक्षा हमारे में तो हमें विशेषता कुछ नजर आती नहीं है। क्योंकि सबों के समान दस मास की गर्भ यातना भोगनी ही पड़ी है। जो सभी जीवों को होती है। आगे अभी परवश महा भयंकर मृत्यु की बला भोगने के लिये पड़ी ही हुई है। जो सभी जीवों के पीछे रहती है। भूख, प्यास, शोक, मोह, दम्भ, ईर्ष्या, दूसरों की निन्दा, दूसरों से बैर इत्यादि महाशत्रुगण रात दिन पीछे पड़े ही हुए हैं। एक बार भी उस साँवली मनोहर मूर्ति का दर्शन सौभाग्य अभी तक इन अभागे नेत्रों को नहीं प्राप्त हुआ।

(क्रमशः)

(गतांक से)

दिव्यक्षेत्र तिरुमल

तेलुगु मूल - श्री जूलकंटि बालसुब्रह्मण्यम्

हिन्दी अनुवाद - श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण

मोबाइल - ८९२८९५२६२२

वैकुंठ को त्याग महाविष्णु

वहाँ लक्ष्मीदेवी के अभाव में वैकुंठ रेगिस्तान की तरह नजर आने लगा था। सब वैकुंठवासी परेशान थे। महाविष्णु का भी मन अपनी पारंपरिक संगिनी के बिना डँवाडोल होने लगा। मन वीरान बन गया। वह चैन खो गया। आखिर, महाविष्णु अपने नगर में रह न पाया। वह भी भूलोक चला आया। आदिलक्ष्मी की तलाश करते करते महाविष्णु ''वराहक्षेत्र'' पहुँच गया।

भूख और प्यासों से तडपते हुए महाविष्णु वराहक्षेत्र में एक महा पुष्करिणी पहुँच गया, जहाँ के पानी ने उसकी प्यास बुझायी। पोखर के दक्षिण में एक इमली का पेड था, जिसके नीचे एक बडी बाँबी थी। बाँबी के बीच में एक बडी माटी की गुफा थी, जिसमें घुस कर महाविष्णु अपने को शीत-वात-आतप की बाधाओं से रक्षा करने लगा। वाह री, विडंबना। देवताओं को भी कष्टों ने नहीं छोडा था, फिर मानवों की क्या गिनती।

ब्रह्मदेव तथा परमशिव का हस्तक्षेप

भृगुमहर्षि के अपने अपने लोकों में से चले जाने के पश्चात्, ब्रह्म तथा परमशिव ने वैकुंठ पर अवलोकन किया। भृगु के लातमार कर चला जाना, लक्ष्मीदेवी का रूठ कर वैकुंठ छोड चला जाना उन दोनों ने देखा। तत्पश्चात लक्ष्मीजी को तलाशते हुए महाविष्णु के वैकुंठ विहाय चले आना भी देखा। फिर उन दोनों ने महाविष्णु का आदिवराहक्षेत्र में एक वल्मीक में छुप जाना भी परखा।

ब्रह्म एवं परमशिव को नारायण की इस दीनावस्था पर बडी दया आयी। उन दोनों ने परंधाम की इस असहाय स्थिति पर अपना सहयोग प्रकट किया। उन्होंने जगदंबा महालक्ष्मी के पास कोल्हापुर गये और उसे अपने प्राणनाथ की दुरावस्था का हाल सुनाया। उसे समझाया कि इस दयामय परिस्थितियों में उसे अपने मनोनाथ का सहयोग दें और दोनों मिल कर पुनः वैकुंठ प्रवेश कर यथारीति भक्तलोक का परिपालन करते रहें।

मगर अभी महालक्ष्मी का क्रोध शांत नहीं हुआ, उसके मन का ताप अभी मिटा न था, तो उसने अपने पतिदेव से

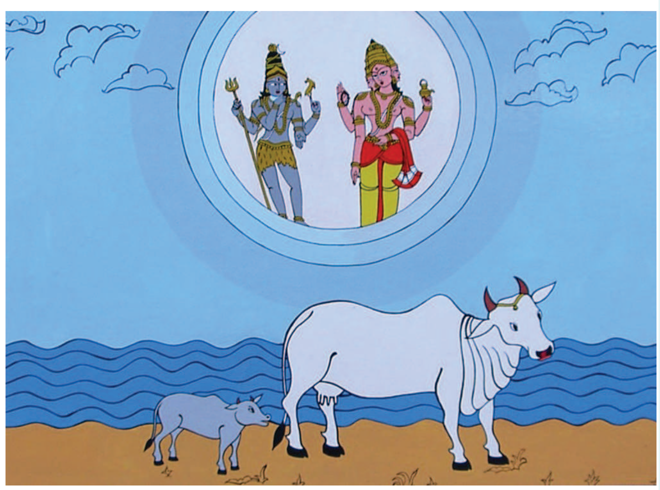

मिलने के प्रस्ताव पर राजी न हुई। बहुत समझाने पर, आखिरकार, अपने प्राणनाथ की भूख-प्यास मिटाने पर सहमत हो गयी।

गाय-बछडे का वृत्तान्त

ब्रह्म तथा परमशिव के द्वारा अपने पतिदेव की बुरी हालत पर विचलित लक्ष्मीदेवी ने उसके कष्टों में अपना सहयोग देने का निश्चय किया था। वह दोनों देव-व्दय-ब्रह्म तथा परमशिव के साथ वराहक्षेत्र पहुँच गयी, जहाँ विष्णुभगवान एक बाँबी में उसीका नाम-जप करते बैठा हुआ है, भूख और प्यासों से।

वे तीनों महानुभाव आदिवराहक्षेत्र पहुँचते ही ब्रह्मदेव एक दुधारी गाय में बदल गया और परमशिव उसका बछडा। लक्ष्मीमाता एक गोपालिका में भेष बदल कर उस देश के राजा के पास गयी।

वराहक्षेत्र यानी आज का नारायणवनम् प्रांत है, जो तिरुमल पहाड से ६० कि.मी. की दक्षिण पूर्व दिशा पर मौजूद है। उन दिनों नारायणवनम् प्रांत का राजा ''आकाशराजा'' था जो आँध्र के चोलवंश का था।

गोपालिका महालक्ष्मी ने अपनी गाय बछडों को राजा आकाश को बेच दिया, अपने मनोनाथ की भूख-प्यास मिटाने।

राजा आकाश के पशुओं के झुंड में चरने जाती हुई वह गाय चोरी छुप्पी जा जाकर उस बाँबी में दूध छोड आती थी, जहाँ वैकुंठ के महराज विष्णुभगवान तपोध्यान में बैठे अपनी मनोनायिका श्रीलक्ष्मी का ध्यान करता था। उस दुधारी गाय का तो थन देखने में काफी बडा और जबर्दस्त था, मगर वह दुहने पर चुल्लू भर का भी दूध देती न थी। राजा के पशु-पालक को आश्चर्य हुआ और शंका भी पैदा हुआ कि यह गाय चोर है, जो चोरी-छुप्पी अपना

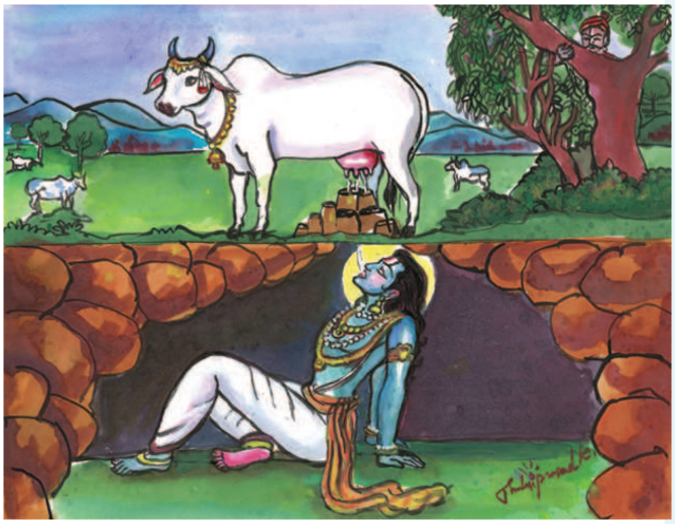

दूध कहीं उँडेल कर खाली थन लेकर यहाँ बगार में नादान-सी चली आ रही है।

अहीर ने ब्रह्मा रूपी दुधारी गाय पर निगरानी रखी। गाय ने खूब दाणा खाया और चल दिया सरासर उस बाँबी के पास जहाँ श्रीस्वामी विष्णु देव बैठा श्रीलक्ष्मी का ध्यान करता था। पशुपालक चोरी छुप्पे उस गाय के ही पीछे पीछे गया और देखा उस आश्चर्य जनक दृश्य को। गाय ठीक बाँबी में अपना दुग्ध छोडने लगी। और इस तरह वह गाय काफी देर तक वल्मीक में दूध की धाराएँ छोडती रही, तब तक कि उसका भारी थन खाली न हो जाय। अपने थन के दूध के खाली होते ही वह परे हट आयी और नादान की तरह अन्य गायों से मिलकर घास चरने लगी। शाम पडते वह गाय अपने बछडे को लिए वापस नारायणवनम् के अपने बगार में चली आयी। अहीर भैय्या ने इस प्रकार दो-तीन रोज गाय के पीछे-पीछे जाकर यह निर्धारित कर लिया कि यह गाय अपना सारा दूध उस निर्देशित बाँबी में छोड़, खाली थन लेकर बगार पहुँच रही है।

अहीर को गाय की इस हरकत पर काफी क्रोध आया!

(क्रमशः)

ऋषभदेव का अवतार

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवांघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

मोबाइल - ९८२१९१४६४२

श्रीमद्भागवतम् में ऋषभदेव का वर्णन विष्णु भगवान के आठवें अवतार के रूप में किया गया है। भागवतम् के प्रथम स्कन्ध में वर्णित श्लोक ''अष्टमे मेरुदेव्यां तु नाभेजीत उरुक्रमः'' से यह सूचना प्राप्त होती है। परम पुरुषोत्तम भगवान ने राजा नाभि एवं उनकी पत्नी मेरुदेवी के पुत्र ऋषभदेव के रूप में अवतरित होकर एक एसा मार्ग प्रदर्शित किया जिसका अनुसरण मानव समाज के सभी वर्गों के महान एवं सम्मानित व्यक्ति कर सकते हैं। ऋषभदेव अत्यंत इन्द्रियसंयमी थे। इस अवतार में भगवान ने अपने पुत्रों के माध्यम से मानवता के अद्भुत् उपदेश दिये। ऋषभदेव का अवतार प्रियव्रत के वंश में हुआ था। प्रियव्रत के कुल में जन्मे महान व्यक्तियों में से कुछ का विवरण निम्न प्रकार है।

प्रियव्रत की महान शक्ति एवं उनके वैराग्य का यशगान स्वयम् नारद ऋषि ने किया था। प्रियव्रत द्वारा परम सत्य को प्राप्त करने का मार्ग चुनने पर उनके पुत्र आग्नीध्र संपूर्ण जगत के सम्राट बने। आग्नीध्र ने न्यायपूर्ण तरीके से पृथ्वी पर राज्य किया और राज्य के सभी लोगों के साथ अपनी संतान की तरह व्यवहार किया। उन्होने सभी नागरिकों द्वारा पूर्णता के मार्ग का अनुसरण करना भी सुनिश्चित किया। उनके नौ पुत्र भी अत्यंत शक्तिशाली एवं न्याय परायण बने। आग्नीध्र ने अपने राज्य को नौ टुकड़ों में बाँट कर नौ पुत्रों को सौंप दिया। उन्होने पिता के निर्देशों का पालन करते हुए अपने राज्यों पर शासन किया।

आग्नीध्र की मृत्यु के बाद उनके सभी पुत्रों ने नौ सुंदर राजकुमारियों से विवाह किया जिनके नाम मेरुदेवी, प्रतिरूपा, उग्रदंष्ट्री, लता, रम्या, श्यामा, नारी, भद्रा तथा देववीति थे। आग्नीध्र के पुत्रों में से एक नाभि था। राजा नाभि ने यज्ञों के स्वामी एवं प्रमुख भोक्ता भगवान विष्णु की आराधना की। एक शक्तिशाली पुत्र प्राप्त करने की इच्छा से नाभि की पत्नी मेरुदेवी ने भी अपने पति के साथ परम भगवान विष्णु की आराधना की। नाभि ने प्रवर्ग्य नामक विशेष यज्ञ का आयोजन किया और भगवान विष्णु उससे पूर्णतया संतुष्ट हुए। भगवान विष्णु नाभि के समक्ष अपने चतुर्भुजी रूप में प्रकट हुए। परम भगवान पीताम्नर धारण किये हुए थे, वे समस्त महापुरुषों में सर्वोत्तम प्रतीत हो रहे थे, वे कमल, शंख,

चक्र तथा गदा से सुसज्जित थे और उनके सभी अंग सुंदर आभूषणों से सुशोभित थे। परम भगवान को अपने समक्ष देखकर नाभि और मेरुदेवी एसा अनुभव कर रहे थे जैसे किसी निर्धन को परम धनराशि प्राप्त हुई हो। तब सभी संतों ने परम पुरुषोत्तम भगवान की स्तुति इस प्रकार की ''हे परम पूज्य। हम आप के दास हैं। यद्यपि आप पूर्ण हैं, किन्तु अहैतुकी कृपावश हमारी सेवाएँ स्वीकार करेंगे। आप समस्त वरदायकों में श्रेष्ठ हैं। हम अपेक्षा करते हैं कि आप राजा नाभि को कोई विशेष आशीर्वाद देने के लिए यहाँ प्रकट हुए हैं। लेकिन हम आप के दर्शन को ही सर्वोत्तम आशीर्वाद समझते हैं। विनम्र राजा नाभि की इच्छा आप के ही समान पुत्र पाने की है।''

तब राजा नाभि, उनकी पत्नी तथा यज्ञशाला में उपस्थित सभी लोगों ने भगवान विष्णु के चरणकमलों पर झुक कर प्रणाम किया। परम पुरुषोत्तम भगवान नाभि की विनयशीलता से अत्यंत प्रसन्न हुए और पुरोहितों से इस प्रकार बोले ''हे ऋषियों! मैं आप की स्तुतियों से बहुत प्रसन्न हूँ। आप के वचन सदैव सत्य हो जाते हैं। आप लोगों ने राजा नाभि के लिए मेरे समान पुत्र की प्राप्ति के लिए स्तुति की है, किन्तु एसा संभव नहीं है क्योंकि मैं अद्वितीय हूँ और मेरे समान अन्य कोई नहीं है। इसलिए मैं स्वयं ही अंश रूप में मेरुदेवी के गर्भ से अवतार लूँगा।''

मेरुदेवी भगवान विष्णु के वचनों से अत्यंत प्रसन्न हुई। तब भगवान अदृश्य हो गये। इस प्रकार वास्तविक धर्माचरण को दर्शाने एवं राजा नाभि की मनोकामना पूर्ण करने के लिए भगवान अपने गुणातीत आद्य सत्व रूप में मेरुदेवी के पुत्र रूप में प्रकट हुए। भगवान इस जगत में अवतरित होने पर भी प्रकृति के तीन गुणों से प्रभावित नहीं होते हैं। वे सतोगुण से भी परे अपने शुद्ध-सत्व रूप में अवतार लेते हैं। भगवान कभी प्रकृति के गुणों से प्रभावित नहीं होते है यह सत्य समझने वाले भाग्यवान व्यक्ति भी प्रकृति के तीन गुणों के प्रभाव से मुक्त हो जाते हैं।

जन्म से ही राजा नाभि के पुत्र में श्रीभगवान के लक्षण प्रकट थे - जैसे उनके चरणतलों में उपस्थित ध्वज, वज्र आदि के चिह्न। दिव्य गुणों वाला पुत्र पिता के महल में पला-बढ़ा। वह परम शांत, इन्द्रियों एवं मन को सदैव वश में रखने वाला तथा किसी प्रकार के भौतिक सुख की इच्छा न करने वाला था। अतः सभी ब्राह्मण, देवता एवं मंत्री चाहते थे कि ऋषभदेव पृथ्वी के शासक बने। राजा नाभि ने अपने पुत्र में उत्तम सुन्दरता, शौर्य, बल, यश, समृद्धि एवं उत्साह के सभी गुण पाये। तब अपने पुत्र को मनुष्यों में श्रेष्ठतम जानकर उसका नाम ऋषभदेव रखा। ऋषभदेव का अर्थ है श्रेष्ठ व्यक्तियों में सर्वश्रेष्ठ। राजा नाभि एवं उनकी पत्नी मेरुदेवी ऋषभदेव जैसे अद्भुत् पुत्र को पाकर अत्यंत प्रसन्न थे।

राजा नाभि ने समझ लिया कि उनके पुत्र ऋषभदेव को समस्त क्षेत्रों के व्यक्ति अपना शासक बनने के लिए सर्वोच्च मानते हैं। लोगों की एसी भावना से संतुष्ट होकर उन्होने शीघ्र ही ऋषभदेव का संपूर्ण जगत के सम्राट की तरह राज्याभिषेक किया। उसके बाद अपने पुत्र का उत्तरदायित्व अनुभवी ब्राह्मणों को सौंप कर नाभि अपनी पत्नी मेरुदेवी के साथ केन्द्रित रूप से साधना में लगने के लिए बदरिकाश्रम चले गये। वहाँ स्वयम को भगवान नर नारायण की सेवा में पूरी तरह लगाकर उन्होने पूर्ण समाधि ले ली। अंत में पूर्णता के साथ उन्हे वांछित वैकुण्ठ प्राप्त हुआ।

हरातोरण

गोदादेवी का तिरुप्पावै और उसका तत्त्व

तेलुगु मूल : डॉ.परावस्तु कमला

हिन्दी अनुवाद : श्रीमती पी.सुजाता
मोबाइल - ९४४१२५४०६१

'तिरुप्पावै' काव्य द्राविड प्रबन्ध है। वह लग भग बारह सौ साल पुरानी तमिलभाषा में लिखा हुआ है। वह द्राविड वेद भी कहा जाता है। 'तिरुप्पावै' का अर्थ क्या है? 'तिरु' यानी श्री है। 'श्री' का मतलब लक्ष्मी, संपदा, मोक्ष आदि अर्थ हैं। 'पावै' नाम के द्रविड शब्द का अर्थ है व्रत। नियम और निष्ठाओं के साथ आचरित होने वाला संकल्प व्यापार 'व्रत' कहलाता है।

१. 'तिरुप्पावै' का मतलब - श्री के वास्ते आचरित एक व्रत है। (पावै का अर्थ है गीतों से गुँथी हुई माला।) श्री को हासिल करने के लिए माला गूँथ कर गीत गाये गोदा ने! माला में किस्म-किस्म के फूल गुँथे हुए होते हैं। सब पुष्प एक ही रस्सी (सूत्र) से गुँथे हुए होते हैं। रस्सी एक, मगर पुहुप अनेक! इन गीतों के भाव चाहे कितने भी हों, मगर वे सब एक ही के लिए हैं। एक ही फल हो प्राप्त करने के लिए, अनेकों पुष्पों व तत्वों से मिले हुए विषयों को एक साथ गूँथ कर गान किया गया है। केवल गान मात्र करने से वह व्रत में कैसे बदला था? यानी, यह एक संकल्प यज्ञ है। मन को संकल्पित कर भक्ति भावना रूपी जल में स्नान को आचरित कर, 'आनंद की अनुभूति' नामक श्री पायी थी तिरुप्पावै महाकाव्य की प्रणेत्री 'गोदादेवी' ने!! यही इस गीत का प्रसादित अनुभव है। यही इस व्रत का संकल्पित मधुर अनुभव है। वह कैसे साध्य है? क्यों नहीं? तब कभी, द्वापर के युग में गोपिकाओं ने व्रेपल्ले (नंदगोकुल) में इस तरह के संकल्प का व्रत किया था। उसके साक्ष्य में भागवतग्रन्थ गोपिकाओं की कथाएँ बता रहा है।

२. 'द्राविड-वेद' क्या है?- भक्तिभाव से भगवान से संबन्धित गाये हुए कुछ गीत 'द्राविड-वेद' कैसे बने? वेद कहने से संस्कृत में, स्वरों से गुँथे असंख्य मंत्र, उनमें अनगिनत भाग, विभाग! केवल तीस गीत मिला कर गाये जाने से वह कैसा वेद बन गया? अनंत वेदों को राशि से तौलने पर यह विश्व भी पर्याप्त नहीं होगा। तीनों वेद तीन परबत हैं। उन पर्वत प्रमाण ज्ञान के अध्ययन करने के लिए भरद्वाजमहर्षि जैसे महात्मा को तीन सौ साल पर्याप्त नहीं हो पाये थे। अब मामूली मनुष्य उस ज्ञान को पाने के लिए क्या यह आयु पर्याप्त हो पायेगी? तभी तो उस राशि तत्व को, उपनिषदों में प्रतिपादित परमात्म के तत्व को, जीवी के पाने वाले ज्ञान को लगा कर परमात्मा को समर्पित भक्ति सुगंधित अलौकिक माला ही तिरुप्पावै। वेदोपनिषदों का सार भगवद्गीता का भी ज्ञान भी सुगन्धित हो कर गुंथित यह तिरुप्पावै माला है। इसी कारण तिरुप्पावैमाला न मुरझायेगा और न इसमें निक्षिप्त परिमल सूख जायेंगे जिसके मनन मात्र से आत्मा का खूब विकसन हो करके, परिमल को बिखरायेगा। तमिल द्रविडभाषा है। तभी तो यह द्रविडवेद बन कर सूक्ष्म में मोक्ष प्रदान करता है।

३. तिरुप्पावै व्रत किन्होंने आचरित किया?- द्राविडदेश में श्रीविल्लिपुत्तूर में एक बटपत्रशायी श्रीकृष्ण का मंदिर है। उस श्रीकृष्ण का अपने तुलसी वन में तुलसीमालाओं से माला कैंकर्य करता था एक भक्त, जिसका विष्णुचित्त नाम था। विष्णुचित्त आल्वार था। 'आल्वार का अर्थ महाभक्त होता है। आल्वार भगवान के प्रेम रूपी सागर में डूबे आदमी होते थे। ऐसे विष्णुचित्त को तुलसी वन में मिला शिशु गोदादेवी है। उस महाभक्त के हाथों पाली हुई वह कन्या भी महा भक्तिन बनी। उन दिनों नंदव्रज में श्रीकृष्ण को पाने के आवेग में गोपिकाओं ने व्रत रखा था। आज - इस कलियुग में अपनी सखियों तथा सहेलियों को ही गोपिकाएँ मान कर, आप स्वयं तिरुप्पावै के गीत गाते हुए उस व्रत रखा था। व्रत रखना ही नहीं, बल्कि श्रीरंगनाथ के पाद पद्मों में लीन हो कर, अपने रखे व्रत का फल पाया था। ''भक्ति श्रद्धाओं से भगवान को चाहने पर, अवश्य उस पा सकेंगे। उसके लिए देश, कालों से कोई संबन्ध नहीं

होता!'' गोदादेवी ने इस परम तत्व को निरूपित कर दिखाया है। इसीलिए विष्णुचित्तजी ने उसे, ''अपनी रक्षा करने के लिए आयी माँ है, आँडाल!! कह कर पुकारा है। लक्ष्मी के अंश से जन्मित गोदादेवी विष्णुभगवान में लीन हो गयी।

४. यह व्रत आँडाल ने क्यों रखा?- लक्ष्मी बन कर रहने वाली वह माँ इस धरातल पर जनम लेना क्यों? जनम लिया तो बस है, मगर फिर ये सारे व्रत रख कर, गीत गाकर, फिर अपना जनम समाप्त करे क्यों? मतलब वही उस परमात्मा का संकल्प है। परमात्मा के हृदय में लक्ष्मी नामक इस ज्योत के सुलगने पर ही, परमात्मा को जीवों को करुणित करने का संकल्प सिद्ध होगा। श्रीकृष्णावतार में धर्म की संरक्षणा व स्थापना के लिए, सबके कर्मों का निर्णय करने वाला परमात्मा ने अर्जुन के द्वारा कर्म करवा कर, जीवों के लिए फिर से गीतोपदेश किया था। अवतार समाप्त करने पर भी परमात्मा तृप्त नहीं हुआ। चिंतन करता ही रहा। तब लक्ष्मीदेवी गोदादेवी बन कर जनम लेकर, पुनः जीवों को तारने के वास्ते, और एक तरीके में भगवान की पूजा अर्चना करने के विधान का अनुग्रह किया था। यहाँ समय बदला। केवल मुँह से कहने से पर्याप्त नहीं, उसके लिए निदर्शन की जरूरत है। इसीलिए आप स्वयं आचरित कर, लो, इस फल को आप भी तो पा सकेंगे। उसने यह निरूपित किया कि कोई भी यह व्रताचरण कर फल पा सकेंगे।

५. इस व्रत का लक्ष्य क्या है?- इस व्रत का लक्ष्य क्या है? फिर अपने एक के सुख के लिए, आनंद के वास्ते क्या इसका आचरण करते हैं? कहने पर इस व्रत के लक्षण स्पष्ट रूप से कहे गये हैं। लोक सब संपदाओं के साथ सस्यश्यामल बन कर रहे। सब लोग मिल करके भगवान को कीर्तित करते हुए, प्रातःकाल स्नान करके आचरित करने वाला यह व्रत है। इस व्रत के नियमों में प्रधानतया स्त्रीत्व पाकर व्रत करें। इस व्रत के मुख्य नियमों में अपनी स्वतंत्रता के भाव को त्याग कर, हम सब भगवान के ही परतंत्र है नामक स्वभाव का पाया हुआ होना। अति प्रधान है। इतना ही नहीं, सौन्दर्य के स्वरूप गोपियों ने इस व्रत को रखा था। सौन्दर्य का मतलब आत्म-सौन्दर्य है। स्नान का मतलब भक्ति के जल में भीग कर पवित्र बनना ही है। कृष्ण की ही आराधना क्यों की थी? भक्ति व दास्य दिलाने वाला कृष्ण है। तभी तो उन दोनों पक्षों में मोक्ष पाया था गोपियों ने।

६. यह व्रत रख कर इन्होंने पाया क्या?- कोई 'पर' नाम का वाद्य था, ग्वाल होने के नाते 'ढपली' नाम का वाद्य माँगा था। स्त्रियों को वाद्य क्यों? यानी यह पर वस्तु रूप में कहे जाने पर भी, निज रूप में क्या दर्शित वस्तु है? कहने पर मालूम होता है कि नहीं। सदा परमात्मा से मिली हुई वस्तुओं को ही गोपियाँ माँगा करेंगी। परमात्मा में संलीन रहना बोले तो, मानवों के लिए साध्य नहीं है, न। वह कब साध्य होगा, उस विधि साध्य बनाता है यह व्रत। यानी गोदादेवी ने व्रत रख कर श्रीरंगनाथ में लीन हो गयी थी न। क्या मानव इस व्रत के द्वारा पाया जाने वाला वही है? ऐसा शास्त्र हो जाती है। तब इस व्रत से पाये जाने वाली बाह्य वस्तुएँ, बाह्य रूप से आचरित नियम और निष्ठाएँ सब ऊपर के लिए दर्शन देने वाली ही हैं, निज रूप से उनके असली अंतर, अर्थ अलग अलग स्पष्ट मालूम पड रहे हैं।

इस तरह अंतरार्थ निक्षिप्त कर कुछ विशेष संकेतों के द्वारा, वस्तुओं के जरिये विषय को मालूम कराने वाला साहित्य प्रतीकात्मक साहित्य कहा जाता है। इस तिरुप्पावै के साहित्य की रचना इस विधा (प्रतीकात्मक) की रचना के तौर पर स्पष्ट हो रहा है। वेदोपनिषदों के भावों, पुराणों की कथाओं, विष्णुभगवान के दशावतार तत्वों को संपूर्ण तौर पर छुपा कर, ऊपर के लिए केवल कन्या-कुँवारियों के द्वारा किये जाने वाला एक स्नानव्रत दिखाई देता है। प्रस्थान त्रय में एक भगवद्गीता के बताये जाने वाले कर्म, ज्ञान, भक्तियोगों को स्पष्ट करते हुए, मधुरानंद पाकर तथा दिव्यानुभूति दिलाने वाली एक अपूर्व भक्ति की माला है यह। गोदादेवी धारने वाली एक भरपूर्ण तोमाला है। भक्ति, गान, तत्वमालिका है। उसके हाथ का तोता आचार्य की प्रतीका है। पुहुपमाला भक्ति के अनन्य भावों का प्रतीक है। ज्ञान को पाना ही नहीं, उसे आचरण में रखना आचार्यों का लक्षण है। ज्ञान, आचरण नामक दो पंखों से, ब्रह्मानंद भावों को मीठे स्वर में तुतलीबोली-सी वाचन करने का तोता आचार्य के स्वभाव का प्रतीक होता है।

७. इस व्रताचरण के लिए चुना समय - गोदादेवी के आचरित इस व्रत को ही 'मार्गशीर्षव्रत' भी नाम है। मार्गशिरमास को ही धनुर्मास कहा जाता है। इस व्रत को इसी महीने में क्यों रखें? मार्ग का मतलब उपाय है। शीर्ष का अर्थ श्रेष्ठ कहा जाता है। भगवान को पाने के लिए वह बहुत ही अच्छा समय होता है। 'प्रणवस्वरूप' श्रीराम ने धनुष धरा था। विष्णु का भी धनुष है।

धनुर्विद्या लक्ष्य साधना के लिए पुरातन काल में सिखलायी जाने वाली विद्या थी। 'धनुष' को प्रणव, आत्मा को बाण और शरीर को धनुष बता दिया जा रहा है उपनिषदों तथा पुराणों में। 'माहों में मैं स्वयं मार्गशीर्ष (अगहन) हो कर हूँ। बता रहा है स्वयं परमात्मा भगवद्गीता में। अतः व्रत के नियम प्रत्येक अर्थ वाले हो रहे हैं। व्रत का फल भी विशेष है। व्रत के आचरण का समय भी विशेषता रखता है। ये सब विशेष अर्थ छुपाये हुए हैं। अतएव 'तिरुप्पावै' साहित्य में प्रतीकों को बताने वाला विशेष पारमार्थिक रचना मालूम पड रहा है।

८. गोदादेवी की प्रार्थना - यह श्री पराशरभट्टरजी का गोदादेवी से प्रार्थित विशेष श्लोक है।

नीला तुंगस्तन गिरितटी सुप्त मुद्बोध्य कृष्णम्
पारार्थ्यम् स्वं श्रुति शतशिरस्सिद्ध मध्याप यंती
स्वोच्छिष्टायां स्त्रजनिगलितं या बलात्कृत्यभुंक्ते
गोदा तस्यै नम इदमिदं भूय एवास्तु भूयः।।

नीलादेवी के उच्चतम हृदय रूपी पर्वतों की गुफाओं (स्तनगिरि के तट पर) सो रहे कृष्णतत्व को जगा कर, आपकी धरी हुई भक्ति माला से बलपूर्वक उस तत्व (श्रीकृष्ण) को बाँध कर, आप मोक्ष पाने के लिए वेद, उपनिषद, पुराण (रामायण, भारत, भागवत) आदियों को अनेकों किस्मों तथा विधाओं में ज्ञात कराने वाले विषयों को निवेदित कर आपने आनंद पाया था। (कृष्णानुभव आनंद, यानी मोक्ष पाया था) ऐसी पवित्र गोदादेवी को मेरे नमस्कार व प्रणाम पुनः, पुनः मैं समर्पित कर रहा हूँ। (ऐसी गोदादेवी की सेवा कर तर जाऊँगा)- यह है इस श्लोक का भाव। भागवत में यशोदादेवी के बडे भाई की बेटी नीलादेवी ने श्रीकृष्ण से ब्याह किया था। यह नीलादेवी बडी सुंदरी था। श्रीकृष्ण इसके अधीन में होने की वजह से वही नीलादेवी (जो द्वापर युग की हो) यहाँ बतायी जा रही है। द्राविड प्रबन्ध नीलादेवी को ''नप्पिन्न पिराट्टि'' नाम से सूचित करते हैं। इसका लक्ष्मीदेवी का अंश है। श्रीकृष्ण को भक्ति से अपने अधीन में बनाये रुक्मिणी, प्रेम से पाश बद्ध किये सत्यभामा का गोदादेवी ने यहाँ क्यों स्मरण नहीं किया? बिना किसी विशेषता के नीलादेवी का श्रीकृष्ण अधीन होकर है - ऐसा क्यों कहा जा रहा है? यह संदेह यहाँ सहज ही उत्पन्न होता है।

९. नीलादेवी कौन है?- वेदों के पंच सूक्तों में 'नीलासूक्त' भी एक बन कर रहा है। कृष्णयजुर्वेद के १.पुरुषसूक्तम् २. नारायणसूक्तम् ३. श्रीसूक्तम् ४. भूसूक्तम् ५. नीलासूक्तम् नामक पाँच सूक्तों में नीलासूक्तम् पाँचवाँ सूक्तम् बन कर विराजमान है।

१. परमात्मा के अपने संकल्प शक्ति से विराट्रूप को धारे विश्वपुरुष पुरुषसूक्तम् में वर्णित हुआ है। भगवान के विराट्रूप का पुरुषसूक्तम् में वर्णन किया हुआ है।

२. समस्त विश्व के समस्त पदार्थों में प्रकाशवान नारायण के स्वरूप का ज्ञान देता है नारायणसूक्तम्। श्रीमन्नारायण के अधीन हुई माताएँ तीन हैं, जो श्रीदेवी, भूदेवी, नीलादेवी हैं।

३. समस्त जीवियों में केवल सुलगने वाली ही नहीं, बल्कि सुलगाने की शक्ति वाली, जीवों को आश्रय बन कर रहने वाली वही श्रीदेवी है। वह परमात्मा के हृदय की आर्ति है, जिस तत्व का ज्ञान श्रीसूक्तम् देता है।

४. समस्त जीवराशि का जन्म कारण बन कर, कर्मफल की रक्षा करने वाली शक्ति भूदेवी है। महाविष्णु के हृदय के निचले भाग में बनी हुई शक्ति रूपिणी है यह, जिसका तत्व भूसूक्त ज्ञात कराता है।

५. अब आखिरी नीलासूक्तम् है। इसमें नीलादेवी भी विष्णु की पत्नी बतायी जा रही है।

१०. नीलातत्त्व - यह देवी समस्त भूत जाल की पालिका है। यह स्वर्गलोक की आधारभूत शक्ति बन कर है। इसीने भूमि का वहन किया है। यह ऐश्वर्य से युक्ता तथा समस्त प्राणियों को अन्नप्रदाता माँ निर्धारित बतायी जाती है। यही नीलादेवी समस्त स्थावर जंगम जगत की अधिनेत्री बतायी जा रही है। इन्द्र, अग्नि, वायु, जल सबकी नीलादेवी अधीन देवता ज्ञात होता है। (अंभो दिवो धरुणः पृथिव्या; नीलासूक्तम्।) ऊर्द्धदिशा का रूप नीलादेवी विस्तार रूपी घी आदि रसद्रव्य, क्षीर आदियों का अनुग्रह देवता ज्ञात हो रहा है। बृहस्पति (जो दैवतत्व का ज्ञाता हो) भी इसीके अधीन में होता है। अतएव शक्ति और अन्न (ब्रह्मानंद) पाने के लिए इस देवी की अवश्य अनुग्रह प्राप्ति होनी चाहिए। परमात्मा का परिपूर्ण ज्ञान प्रसादन कर मोक्ष को प्रदान करनेवाला विष्णुभगवान के हृदय में छिपा नीलातत्व ही है। अतः उस तत्व के अधीन में हुए श्रीकृष्ण को जगाना चाहिए।

११. कृष्णतत्व छिपा है कहाँ?- नीलादेवी के हृदय की गुफाओं में श्रीकृष्ण का तत्व छिपा हुआ है। उपनिषदों के प्रतिपादित परमात्मा का तत्व भी जीवात्मा के हृदय की गहराइयों में भी आंतरिक तौर पर सुषुप्तावस्था में छिपा होता है। नीले का काला, पहाड आदि अर्थ हैं, जीवात्मा जड स्थिति (पहाड सा तत्व) में है। ऊपर से अंधेरे में पडा है। उसे उजियारे में लाना होता है। प्रकाश में लाने के लिए क्या करना चाहिए? अंधेरे को हटाने या दूर भगाने को दीप जलाना चाहिए। अज्ञान रूपी तमस को हटाने के वास्ते ज्ञान रूपी दीप जलाना होगा। गोदादेवी ने यहाँ, इस जगह, जीवी को ज्ञानोदय होने के वास्ते, वेदों में असंख्य ढंग से प्रबोधित विज्ञान को सरलतर गीतों में बदल कर गीत गाये थे। मृदु मधुर गान से जीवी की तामस निद्रा को दूर भगाया था।

''जीवी को अभिमुख व सुसाध्य मोक्ष दिलाना चाहिए। जड तत्व छोड कर चैतन्यवंत बन जाना चाहिए।'' ऐसी उपनिषद भावना से श्रीकृष्ण सिंह को जगाया था। 'यह तुम्हारा तत्व है जी! जीवों के उद्धार में उपेक्षा न हो।' कहती हुई श्रीकृष्ण सिंह को ठोंक कर नींद से जगाया था, गोदादेवी ने! 'आंडाल' का अर्थ संरक्षण करने वाली महिला होता है। उस दयामयी माँ का जनम जीवों की रक्षा व संरक्षण हेतु हुआ था, अतएव, परमात्मा को उपनिषदों की गुफाओं (नीला के तत्व) से जगाया है। जीवों के हृदय की गुफाओं में स्थित आत्मा को जागरूक किया है।

१२. क्या जीवात्मा की हृदय गुफाओं में परमात्मा निहित है?- क्या जीवात्माओं के हृदय गुफाएँ हैं जिनमें परमात्मा की उपस्थिति का क्या निदर्शन है? प्रश्न उत्पन्न होने पर समाधान हाँ ही होयेगा। जीवात्मा के हृदय में परमात्मा का अस्थित्व वास्तव है। तभी तो अज्ञान अंधकार में स्थित मनुष्य ज्ञानवान् बन कर, अपने ज्ञानोदय के कारण महात्मा या आचार्य बन रहा है। क्या बीज में बड का पेड है? या बड के पेड में बीज है? ऐसा सोचने पर बड के पेड में बीज है। बड का पेड स्थूल शरीर वाला जीव है, जिसके शरीर में निहित आत्मा बीच हैं। बीज में बड का पेड रहने का तात्पर्य परमात्मा में समस्त ब्रह्मांड का भांड निक्षिप्त हुआ होना है। यह शक्ति उसके (परमात्मा के) संकल्प से (चेतित होने पर) सृष्टि का रूप धारण करता है। जब चेतित न हो, तो परमात्मा में निक्षिप्त होकर (लय होकर) रहेगा। 'नीला' का अर्थ बड का पेड भी है। इसीलिए परमात्मा के तत्व को बड का पेड कहा जाता है। बड का पेड परमात्मा के तत्व का प्रतीक है, जिस कारण जीवात्मा के हृदय की गुफाएँ परमात्मा के निलय हैं।

१३. जीवात्मा के हृदय गुफाएँ - कैसे?- सब प्राणियों के हृदय गुफाएँ होने की बात स्वयं परमात्मा ने ही बताया है। भगवद्गीता के ''पुरुषोत्तमप्राप्ति योग'' में (१५वाँ अध्याय १५वाँ श्लोक) यों कह रहा है भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से -

सर्वस्वचाहं हृदि सन्नि विष्टो, मत्त स्मृतिर्ज्ञानिमपोहनंच
वेदैश्च सर्वै रहमेव वेद्यो, वेदान्त कृद्वेद विदेह चाहम्।। (गीता १५-१५)

''सर्व प्राणियों की हृद्गुहाओं के अंदर में अंतरात्मा बनकर हूँ। मेरे ही कारण उन्हें याददाश्त, वस्तु-ज्ञान, सही विचारण संभवित हो रहे हैं। वेदव्यास मैं ही हूँ। वेदान्तकर्ता मैं ही हूँ। वेदार्थों का ज्ञाता स्वयं मैं ही हूँ।'' श्रीकृष्ण के इस प्रकार के कथन से ('मैं ही परमात्मा' कहते हुए आगे खडा व्यक्ति) ''इसका पक्का निदर्शन क्या है?'' नामक प्रश्न अर्जुन में उदयित होने की शंका भाँप कर उसके संदेह की यों निवृत्ति की। ''वेदार्थ ज्ञात कराने वाला परमात्मा स्वयं मैं ही हूँ। वह वेदकर्त्ता भी मैं हूँ।'' 'ब्रह्मविद्योपनिषत' इस प्रकार कहता है -

''समस्त साक्षी सर्वात्मा सर्वभूत गुहाशयः
सर्वेन्द्रिय गुणाभास सर्वेन्द्रिय विवर्जितः।।'' (ब्रह्मविद्योपनिषत-१०७)

''मैं ही समस्त का साक्षी, सर्वात्म रूप हूँ। समस्त प्राणियों के हृदयों की गुफाओं में स्थित हूँ! सर्वेन्द्रिय गुणभास हूँ! सर्वेन्द्रियविवर्जित हूँ!! अतएव, समस्त प्राणियों के हृदयों की गुफाओं में व्याप्त रह कर, सर्व इन्द्रियों को प्रकाशमान बनाने वाला परमात्मा ही है। जीवात्माओं के हृदय पर्वतों की गुफाओं के प्रतीक हैं।

१४. क्या श्रीकृष्ण सोता हुआ सिंह है?- उपनिषत् गुफाओं में सो रहा परमात्मा ज्ञानतत्व है। श्रीकृष्ण रोशनी का प्रतिमान है। श्रीकृष्ण बोले तो नीलमणि वाला भी अर्थ देता है। सोता हुआ सिंह जब चैतन्यवंत बनते ही जिस तरह इर्द-गिर्द परख कर देखता है, ठीक उसी प्रकार परमात्माशक्ति भी (संकल्प मात्र से) जागृत होते ही, समस्त सृष्टि भी चैतन्यवंत बनेगी। यही विष्णुभगवान के दशावतारों में से नृसिंहावतार का तत्व है। अंतरात्मा के रूप में स्तंभ में आवहित परमात्माशक्ति चेतना पाकर, हिरण्यकशिप के चाहने के तरीके से दहाडा था।

लेकिन फिर भी, गोदादेवी यहाँ कृष्ण-सिंह को जगाकर, भक्ति, ज्ञान माला समर्पित कर अनुगृहीत करने की प्रार्थना की थी। सिर्फ अपने ही को नहीं बल्कि, समस्त जीवों की रक्षा की प्रार्थना की। वह भक्ति भाव, वह आर्त्तभाव-वे ही उसे बाँध कर रखने समर्थ बन गये। अभय दिया कि ठीक है, ऐसा ही हो। सोते हुए जीवात्मा को चैतन्यवंत बना कर, उपनिषदों के प्रतिपादित ज्ञान पाकर, ब्रह्मानंद का अनुभव पाने को उकसाती है गोदादेवी तिरुप्पावै ग्रन्थ में। वेदों के लिए पर्वत, उपनिषदों को गुफाएँ, उनमें बसे परमात्मा को सिंह प्रतीक हैं।

१५. नीलादेवी-श्रीकृष्ण और गोदादेवी - श्रीकृष्ण नीलादेवी के हृदय रूपी पर्वत की गुफा में सो रहा है। यहाँ 'गिरि' के पहाड, बादल भी अर्थ हैं। स्तनित कहने से मेघ है। नीलभ का भी अर्थ बादल है। बादल का मतलब दिखता शून्य होता है। उसमें प्रकाशित होने वाला परमात्मा है। शून्य छिपकर हुआ ज्ञानतत्व परमात्मा है। काला बादल गरजने से चेतना पाकर बरसता है। बरस कर जीवों को आनंद देता है। इस तरह बरसने का तत्व श्रीकृष्ण का, नीलादेवी का और गोदादेवी का भी है। कृष्ण का काला, नीला बादल का-सा रंग है। घी, दूध, वर्षा का अनुग्रह प्रदाता के रूप में नीलादेवी बतायी जाती है। वह परमात्मा की शक्ति को स्पंदित करने का तत्व है। वही श्रीदेवी है और वही गोदादेवी भी है। भक्ति, ज्ञान तत्वों को मिलाकर गुँथी माला से, परमात्मा को चैतन्यवंत बना कर, बन्धित कर आत्मानंद पा सकेंगे - इस तत्व को प्रत्यक्ष ढंग से मालूम कराया है। अनुभव पाकर बताने वाले आचार्य होते हैं। तभी तो गोदादेवी आल्वार का दर्जा पायी हुई है।

भक्ति, ज्ञान प्रसूनों से माला (तिरुप्पावै) दिला देने से, मधुर संगीत स्वरों से कटु-रूपी उपनिषदों के तत्व बोलने से गोदादेवी ने तोते का स्वभाव पाया है। फूलमाला, तोते के रूप गोदादेवी के प्रतीक हैं। मेघ, गाढ़ा काला बादल श्रीकृष्ण, नीलादेवी, गोदादेवी के प्रतीक हैं। क्योंकि, भक्ति के पवनों पर बरस कर, सुस्ताने का तत्व मेघ का है और उन सबका भी है।

१६. गोदादेवी, भक्तिमाला, कांति-लता, दिव्य कंकण-ध्वनि- गोदादेवी भक्ति की सुम-माला, सोने की कांति लता कह कर बतायी जा रही है। ''शूडिक्कोडुत्त शुडरक्कोडिये! तोल पावै पाडि यरुल वल्ल पल वलै याम, नाडि नी वेंगडवर्केन्नैविदि येन्र विम्मात्तम, नंगडवा वण्णमे नलगु!'' कहते हुए पराशरभट्टर ने गोदादेवी की स्तुति की थी। ''सोने की रश्मियाँ (भक्ति, ज्ञान, सौरभ) बिखेरती पुष्पमाला धर कर, उसे श्रीरंगनाथ को समर्पित ए, सोने की लता। पूर्व कभी हुए दिव्य व्रत के आचरण में मधुर गीत गाकर, अनगिनत ज्ञान तरंगिणियाँ शब्दित की हुई दिव्य कंकण धारिणी। जैसे वेंकटाचलपति को अपने को प्रिय बनाने की अभ्यर्थना तूने की थी, तेरे दास हम्हीं को उस व्रत का भाग्य दिला दो, माँ।'' - उस श्लोक का यह भाव है।

गोदादेवी श्रीरंगेश्वर को समर्पित माला भक्ति, ज्ञान सौरभ बिखेरने वाली थी। गोदादेवी की भक्तिमाला में प्रतिक्षेपित किया जा रहा है। शरीर में छिपे षट्चक्र (कँवल) सोने की इस लता में लगाये हुए हैं। ज्ञानतत्व को पाना ही सोने व कांति-लता का संकेत है। गोदादेवी सोने की कांति-लता का प्रतीक है। गोदादेवी के गाये गीत तरह तरह से (श्रुति के अनेक ढंगों से प्रतिपादित) ध्वनित कंकण के शब्दों के हुए हैं। यानी-भक्ति-सुम-माला को परमात्मा को समर्पित करने वाला हाथ अनेक तरह के कंकणों की ध्वनि करने वाला हो। हाथ के हिलने से कंकण (चूडियाँ) खनकतें हैं। हृदय के स्पंदन को हाथ की चूडियाँ प्रतिध्वनित करती हैं। गोदादेवी का तिरुप्पावै दिव्य कंकणों का प्रतीक है। 'वें' याने पाप, 'कट' हटाने वाला, अतएव वेंकटाचलपति परमात्मा का साक्षात् रूप है। वेंकटाद्रि भी परमात्मा पहुँचने का एक ज्ञानतत्व है।

१७. व्रतस्थल गायें दूध सस्यसमृद्धि हंस धान की फसल गोकुल - श्रीकृष्ण के संश्लेषण के लिए गोपियों द्वारा रखा जाने वाला व्रत कात्यायनीव्रत है। गोपियों का आवास स्थान नंदगोकुल व व्रेपल्ले है। वहाँ गायों की समृद्धि है। वर्षा की भरमार है। फसलें खूब होकर फल देंगी। धान की फसलों में हंस आदि विशेष पंख पखेरु संचरित करते रहते हैं। कात्यायनी नाम पार्वतीदेवी का है, जो शिवभगवान की अर्द्धांगिनी है। जैसे पार्वती ने शिवपरमात्मा में लय पाया था, उसी प्रकार गोदादेवी ने भी स्वामी श्रीरंगनाथ में रम जाना चाहा।

१. गोपालक तथा गोपिकाएँ - गायों के पालक व रक्षक गोपालक है। 'ग्वाल' शब्द का रक्षा करने का तत्व है। ग्वालता का अर्थ है - निर्मलत्व। 'गोयम' कहने से हंस का नाम है। प्रणवोपासना करते हुए हंसत्व के अधीनकारी ग्वाल हैं। 'गो' का एक और अर्थ वेद भी है। अर्थात् वे गोपालक हैं, जिन्होंने वेदों की रक्षा की था। गोपिका का भी अर्थ रक्षा करने वाली

होता है। गोपालक गायों की रक्षा करने पर, गोपिका ने दूध की हिफाजत की थी। दूध और दही सात्विक तत्व हैं। उन तत्वों छिपा परमात्मा का तत्व, वहीं मक्खन है। उस परम पवित्र मक्खन को दही में से निकालना और यज्ञ-यजनादि कर्मों में उपयोगित घृत या घी तैयार करना गोपियों का काम है। तभी तो, गोपियों के लिए नजदीक में जो तत्व था, वह था श्रीकृष्ण का तत्व। निर्मल रूपी मन से परिशुद्ध कृष्णतत्व प्रणव की आराधना के कर्म किये थे, गोपियों ने। गोष्य का कर्म था छिपाना प्रणव को हृदय में छिपाया था गोपियों रूपी भक्त।

२. यमुनानदी और श्रीकृष्ण - श्रीकृष्ण यमुनानदी के किनारे स्थित व्रेपल्ले या नंदव्रज अथवा नंदगोकुल में छिप कर बडा हुआ था। कृष्ण शब्द का यमुना भी अर्थ है। 'कृष्ण' शब्द का कौआ 'कोयल' आग, बादल आदि भी अर्थ हैं। कौए की तरह हुई जीवात्मा यदि भक्ति से भगवान की आराधना करे, तो कोयल की तरह मधुर गान या प्रणवगान करा सकेगा। श्रीकृष्ण पापों को अगन की तरह भस्म करा सकेगा। उसका यशोगान करने से करुणा कलित हृदय से मेघ की तरह बरस कर समस्त प्रकृति को हरा भरा बना सकेगा। यही कृष्णतत्व है। निरा काली और गहरी यमुनानदी श्रीकृष्ण के करुणा कलित मनोहर रूप का प्रतीक है। वहाँ व्रेपल्ले में बड़ा हुआ था श्रीकृष्ण। 'व्रेयु' शब्द का काटना अर्थ है। जन्म के संबन्धों को काट कर, मुक्ति का प्रसादन करने वाला है - व्रेपल्ले। प्रणव के स्वरूप श्रीकृष्ण को जिसने अपने छिपाया या अपने में समाया, वही व्रेपल्ले है। 'रेवु' का अर्थ चिह्न होता है। प्रणव का संकेत रेपल्ले है। 'यमुना' के पार्वती, नदी आदि भी अर्थ हैं नदी में स्नान कर पार्वतीदेवी की तरह परमात्मा में लय होने की कामना से किया हुआ परम कर्म व रखा हुआ व्रत है, गोपियों का किया हुआ कात्यायनीव्रत।

३. श्रीविल्लिपुत्तूरु - गोदादेवी - श्रीविल्लिपुत्तूरु में गोदादेवी ने जन्म लिया था। उसे बडा किया था श्री विष्णुचित्तुलु ने। विष्णुदेव को सदा जो चित्त में स्मरता है, सो विष्णुचित्त है। उस विष्णुचित्त को मिली थी गोदादेवी। 'गो' बोले तो वेदों में प्रतिपादित परमात्मा का त्तत्व है। वही श्रीतत्व है। 'तिरुप्पावै' ने उसे दिया था। इसीलिए वह 'गोदा' बनी है। विल का अर्थ झुका हुआ अर्थात् धनुष है। उपनिषदों वाली पर्वतीय गुफाओं में प्रणव स्वरूप श्रीकृष्ण छिपा है। धनुष ही गोदादेवी का तन है। 'पुत्तु' शब्द का अर्थ तमिल में बाँबी है। बाँबी का अर्थ छिपी हुई जगह, पैदा हुआ स्थान है। प्रणव जनम कर, शब्दित व गुन्जित स्थान है श्रीविल्लिपुत्तूरु। उस प्रणव की शब्द ध्वनि को सुनने सभी जनों को प्रेरित कर रही है। गोदादेवी और प्रणव का अनुभव कर, मुक्ति पाने का आह्वान दे रही है।

अन्नवयल् पुदुवै यांडालरंगर्कु, पन्नु तिरुप्पावै पल् पदियम् - इन्निशैयाल् पाडिक्कोडुत्ताल् नर्फामालै, पूमालै, शूडिक्कोडुत्तालै च्चोल्।।

हंसों के विचरते फसलों वाले खेतों से भरे श्रीविल्लिपुत्तूरु में अवतरित गोदादेवी ने आप, अपने मन में भावित (अनुभवित) 'तिरुप्पावै' नामके पाशुरों (गीतों) को मधुरमय ढंग से गाकर, श्रीरंगनाथ को माला बना कर समर्पित किया है। इसीलिए वह 'शुडिक्कोडुत्त' धरकर दिये (प्रणव को) संप्रदाय की माँ बनी हुई है। अतएव उसे (मन में) स्मरो! (उस व्रत का आचरण का तरो!) विष्णुचित्तजी की रक्षा करने ही के लिए नहीं, बल्कि समस्त भू-जनों की रक्षा करने के लिए अवतरित होने से गोदामहादेवी ने ''आंडाल'' का दर्जा पाया।

१८. श्रीकृष्ण का भगवद्गीता गोदादेवी का तिरुप्पावै - अर्जुन को एक बहाना बना कर, कुरुक्षेत्र युद्ध को एक निमित्त बनाकर श्रीकृष्ण ने द्वापरयुग में, समस्त मानव कर्म, ज्ञान भक्ति योग पाने का भगवद्गीतोपदेश किया था। ठीक उसी तरह गोदादेवी कलियुग में मानव सब इस कर्म के द्वारा भक्तिमार्ग में अर्चावतार परमात्मा को पूजकर, भक्ति के जरिये मुक्ति पा सकेंगे - एसा ज्ञात कराया है। उसके लिए एक कारण के तौर पर गोपियों तथा उनके द्वापर में आचरित व्रत को चुना था। वेदोपदेश, उपनिषदों के तत्व को सुंदर ढंग से माला में गूँथ कर, मधुर गीत बनाकर गाकर उसके जरिये श्रीकृष्ण को पाया है। कहती है - आप भी इह पर पाओ रे मानव! संपूर्ण गीतातत्व के लिए 'तिरुप्पावै' ग्रन्थ एक बेजोड प्रतीक बन कर है। गीता के बोधित निष्काम कर्मतत्व, भक्ति-ज्ञान-कर्मयोग, जीवी के परमात्मा को पाने के लिए करता हुआ कर्म तत्व, परमात्मा की लीला विभूतियों के तत्व, भगवान के अवतारों के तत्व, धर्म का रक्षण, इन सबसे बढ कर जीवों पर परमात्मा को हुई आर्त्ति - ये सब मधुर ढंग गाये जाकर, अर्चावतार की प्रामुख्यता की मधुरिमा, बिखेरती रही है तिरुप्पावै रचना का महाग्रन्थ।

(गतांक से)

श्री पिळ्ळै लोकाचार्य

- श्री भवरी रघुनाथ रांदड
मोबाइल - ९९००९२६७७३

श्री पिळ्ळै लोकाचार्य ने मुमुक्षुवों के उत्थापन हेतु भगवान कि असीम कृपा से कई ग्रंथों की रचना किये। उन में से अठारह ग्रंथ केवल हमारे सत्-सांप्रदाय के विशेष दृष्टिकोण को दर्शाता है (जैसे - रहस्य त्रयम्, तत्त्व त्रयम्, अर्थ पंचकम् इत्यादि) जो नम्माळ्वार के तिरुवायमोळि पर आधारित है। इन में से निम्नलिखित श्रीवैष्णवों के लिये सबसे अधिक महत्वपूर्ण है-

१. **मुमुक्षुप्पडि -** यह एक रहस्य ग्रंथ है जिसमें श्री पिळ्ळै लोकाचार्य ने रहस्य त्रय - (तिरुमंत्र (अष्टाक्षरी मंत्र) द्वयमहामंत्र, चरमश्लोक) का विवरण बहुत ही उत्कृष्ट और सरल सूत्रों में दिया है। इसी ग्रंथ पर श्री वरवरमुनि स्वामीजी ने टिप्पणि लिखि है। यह एक ऐसा मूल ग्रंथ है जिसके बिना प्रत्येक श्रीवैष्णव रहस्य त्रय की महिमा और वैभव कभी नही जान सकते है।

२. **तत्त्व त्रय -** यह ग्रंथ कुट्टि भाष्य (छोटा श्रीभाष्य) के नाम से प्रसिद्ध है। यह ग्रंथ श्रीभाष्य पर आधारित है जिसमें स्वामि पिळ्ळै लोकाचार्य ने तीन तत्त्वों (चित, अचित, ईश्वर) का सारांश सरल सूत्रों में बतलाया है। और फिर श्री वरवरमुनि स्वामीजी के व्याख्यान के बिना हम इस ग्रंथ के वैभव और महिमा कदाचित नही जान पायेंगे।

३. **श्री वचन भूषण दिव्य शास्त्र -** यह ग्रंथ की रचना केवल और केवल पूर्वाचार्य और आळवारों के दिव्य कथन पर आधारित है। यह ग्रंथ श्री पिळ्ळै लोकाचार्य का महान काम है जिसमें हमारे सत्-सांप्रदाय के गूडार्थो का स्पष्टीकरण है। यह ग्रंथ सत्सांप्रदाय के गोपनीय अर्थों को दर्शाता है और श्री वरवरमुनि स्वामीजी इस ग्रंथ पर आधारित अपनी टिप्पणि में इसका स्पष्टीकरण देते है। तिरुनारायणपुरत्तु आयि ने इस ग्रंथ पर टिप्पणि प्रस्तुत किये।

अनुवादक टिप्पणि - प्रत्येक श्रीवैष्णव का कर्तव्य है की अपने जीवन काल में एक बार इन ग्रंथों पर आधारित कालक्षेप जरूर सुने। श्री पिळ्ळै लोकाचार्य की महानता यह थी की उन्होने अपने ग्रंथों की रचना सरल तमिल भाषा में किये और इन ग्रंथों को कोई भी समझने के सक्षम है अगर वह जानने के इच्छुक हो। मुमुक्षुओं के बाधावों का निष्काशन हेतु और सत्सांप्रदाय के दिव्यार्थो के विषयों को समझने की बाधा का निष्काशन हेतु उन्होंने हमारे पूर्वाचार्यों के दिव्य वचनों को (जो ईडु इत्यादि ग्रंथों से सम्मिलित है) सौभाग्य से लिखित रूप में अपने ग्रंथों में प्रस्तुत किये है। वह सबसे पहले ऐसे आचार्य है जिन्होंने हमारे पूर्वाचार्यों के प्रमाण वचनों का संरक्षण किये। इसीलिये वह प्रमाणरक्षक आचार्य के नाम से भी जाने गए। हलांकि प्रमाणरक्षक के होने के बावजूद वह प्रमेयरक्षक भी हुए (यानि जिन्होंने भगवान को बचाया)। कहते है जब भगवान की असीम कृपा से श्रीरंग में सब कुछ अच्छा चल रहा था, उसी दौरान मुस्लिम राजाओं के आक्रमण की खबर फैल चुकी थी। श्रीरंग में स्थित श्रीवैष्णवों और सामान्य प्रजा को यह ज्ञात था की मुस्लिम आक्रमणकारि केवल हमारे मंदिरों पर आक्रमण करेंगे क्योंकि मंदिरों में अत्यधिक धनराशि, सोना, चाँदि इत्यादि उपलब्ध है। यह जानकर तुरंत श्री पिळ्ळै लोकाचार्य

जिन्होंने इस स्थिति को संतुलित और नियंत्रित किया। उन्होंने अपने शिष्यों को आदेश दिया की वह सारे पेरियपेरुमाळ के सन्निधि के सामने एक बडी दीवार खडा करे और वह श्रीनम्पेरुमाळ और उभय नाच्चियार को लेकर दक्षिण भारत की ओर निकल पडे।

वे वृद्ध अवस्था में होने के बावजूद भगवान के दिव्य मंगल विग्रह को अपने साथ ले गए। बीच रास्ते में भगवान के दिव्यमंगल विग्रह पर सजे हुए आभूषण कुछ स्थानिक चोरों ने चुरा लिया। सबसे आगे जाते हुए श्री पिळ्ळै लोकाचार्य को जब यह ज्ञात हुआ वह तुरन्त उन चोरों के पीछे भागे और उन्होंने उन चोरों को समझाया और चोरों ने उनके चरण कमलों का आश्रय लिया और आभूषण समर्पित किया। आभूषण पाकर श्री पिळ्ळै लोकाचार्य आगे निकल हुए।

उसके पश्चात् श्री पिळ्ळै लोकाचार्य ज्योतिष्कुडि (मदुरै के पास - अना मलै नामक पहाड की दूसरी ओर) पहुँचे। पहुँचने के बाद, वृद्ध, श्री पिळ्ळै लोकाचार्य ने अपने प्राण त्याग करने की सोच से अगले दर्शन प्रवर्तक (तिरुमलै आळ्वार-तिरुवायमोळिपिळ्ळै) को घोषित किया और कूर कुलोत्तम दासर को उपदेश देते है कि वह तिरुवायमोळिपिळ्ळै को अपने प्रशासनिक कार्यों से मुक्त करें और उन्हे अगले दर्शन प्रवर्तक के कार्यों में प्रशिक्षण दे। इस प्रकार अपना भौतिक शरीर (चरम तिरुमेनि) त्यागकर परमपद कि ओर प्रस्थान किए।

श्री वरवरमुनि स्वामीजी अपने उपदेशरत्नमालै में श्री पिळ्ळै लोकाचार्य को गौरवान्वित करते हुए उनके दिव्य शास्त्रों में श्रीवचनभूषण को ओर भी अत्यधिक गौरवान्वित किये। इस दिव्य ग्रंथ में श्री वरवरमुनि स्वामीजी आळ्वारों के अवतारों, पूर्वाचार्यों के अवतारों, श्रीरामानुजाचार्य की कृपा तिरुवायमोळि पर आधारित टिप्पणियों का उल्लेख इत्यादि और श्री पिल्लै लोकाचार्य का असीमित वैभव और अन्ततः श्री वचनभूषण दिव्यशास्त्र का वैभव और इस ग्रंथ में लिखित सूत्रों के अर्थों का सार हम सब के लिए प्रस्तुत किये। श्री वरवरमुनि स्वामीजी कहते है - प्रत्येक श्रीवैष्णव को श्री वचनभूषण में प्रस्तुत सूत्रार्थों का पालन हमारे जीवन में करना अत्यावश्यक है और इस प्रकार पालन करने से हम सभी निश्चित रूप से श्रीरामानुजाचार्य के कृपा के पात्र होंगे। श्री वरवरमुनि स्वामीजी कहते है - अगर हमें पूर्वाचार्यों के दिव्य वचनों के ज्ञान और अनुष्ठान (सदुपदेश और सात्त्विक जीवन) पर विश्वास नहीं है और अपने बुद्धि से खुद के अर्थ, ज्ञान, व्याख्या, तर्क इत्यादि की रचना करें तो केवल वह हमारे अज्ञान को दर्शाता है। श्री वरवरमुनि स्वामीजी जो कभी भी अपने व्याख्यानों में या कालक्षेपों में अपशब्दों का प्रयोग नहीं करते परन्तु उन्होंने कई बार मूर्ख शद्ब का प्रयोग किया है क्योंकि वे यहाँ उन लोगों के निर्दयता को दर्शाते है जिन्हे पूर्वाचार्यों के श्रीसूक्तियों पर विश्वास नहीं है और इस विश्वास के बिना वे लोग श्रीवैष्णव होने का अभिनय करते है। इस प्रकार श्रीवचनभूषण पर आधारित तत्त्वसार को श्री वरवरमुनि स्वामीजी ने अपने उपदेश रत्नमालै में प्रस्तुत किया है।

श्रीवेदान्ताचार्य ने एक बहुत हि सुन्दर अनोखे प्रबंध की रचना किये जिसे हम लोकाचार्य पंचाशत के नाम से जानते है जिसमें केवल और केवल श्री पिळ्ळै लोकाचार्य को गौरवान्वित किया गया है। हालांकि श्री वेदान्ताचार्य श्री पिळ्ळै लोकाचार्य के उम्र के तुलना में पच्चास वर्ष छोटे थे परन्तु श्री पिळ्ळै लोकाचार्य के प्रति उनकी श्रद्धा और प्रशंसा गौरवनीय है और इस ग्रंथ का पाठ तिरुनारायणपुरम में प्रतिदिन होता है।

हम श्री पिळ्ळै लोकाचार्य के चरण कमलों का आश्रय लेकर प्रार्थना करे की हम सभी को भगवान और अपने आचार्य के प्रती सद्भावना हो।

पिळ्ळै लोकाचार्य का तनियन -

तुलायां श्रवणे जातं लोकार्य महमाश्रये।
श्रीकृष्णपाद तनय तत्पदाम्भोज ष पदम।।
लोकाचार्यय गुरुवे कृष्णपादस्य सूनवे।
संसारभोगिसन्दष्टजीवजीवाटावे नमः।।

(समाप्त)

श्रीविल्लिपुत्तूर

तेलुगु मूल - श्री के.के.मंगपति

हिन्दी अनुवाद - श्रीमती एन.मनोरमा

मोबाइल - ९६६६६९७८४२

तमिलनाडु में मधुरै शहर की नैऋति दिशा की ओर लगभग ८० कि.मी. की दूरी पर श्रीविल्लिपुत्तूर नामक शहर है। यह शहर विरुधनगर जिला के अंतर्गत आती है। श्रीविल्लिपुत्तूर क्षेत्र में श्री वटपत्रसायी पेरुमाल् मंदिर का दर्शन कर सकते हैं। यह मंदिर बहुत प्राचीन मंदिर है। इस मंदिर के स्वामी को श्री वटपत्रसायी के नाम से पुकरते हैं। मंडूक नामक महर्षि को श्री वटपत्रसायी स्वामीजी ने अपना दर्शन भाग्य दिया था। इस पेरुमाल् मंदिर को आल्वारों ने 'दिव्यदेश' कहकर स्तुति की। पेरियाल्वार और आंडाल देवी ने दो पाशुरों में मंगलाशासन किया। श्री वटपत्रसायी के ब्रह्मोत्सव तमिल पुरटासि मास में (सितंबर-अक्तूबर) १० दिनों के लिए मनाया जाता है। मंदिर का दर्शन समय सुबह ७.०० बजे से दोपहर १२.०० बजे तक और सायं ४.०० बजे से रात ८.०० बजे तक है। श्री वटपत्रसायी मंदिर के राजगोपुर को तमिलनाडु राज्य सरकार ने राज्य चिह्न के रूप में स्वीकारा। इसके कारण मंदिर की विशिष्टता और बढ़ गयी है।

श्री वटपत्रसायी मंदिर की दाईं ओर स्थित बगीचे में आंडाल माँ का अवतार प्रांत कहकर श्रीवैष्णवों ने उस बगीचे को गौरवान्वित किया। इस बगीचे को ''आंडाल उद्यानोत्सव'' कहते हैं। इस जगह पर भूदेवी का अंशावतार श्री आंडाल देवी वटपत्रसायी मंदिर के पूजारी (विष्णुचित्त) को प्राप्त हुई। तदनंतर काल में श्रीरंगमन्नार पेरुमाल् मंदिर को निर्माण किया। उन्हें 'कोदै' नाम से पालन-पोषण किया। तेलुगु प्रांत के लोग, इन्हें गोदादेवी नाम से जानते हैं।

श्री वटपत्रसायी मंदिर के पीछे श्री आंडाल माँ का एक अच्छा सुन्दर मंदिर है। मंदिर के अंदर का शिल्पकला सौंदर्य अद्वितीय है। कल्याण मंडप (विवाह मंच), अद्दाल मंडप (आईना मंडप), महा मंडप, मुख मंडप, विविध सन्निधियाँ (मंदिर के राजमार्ग) भी हैं। मंदिर के गर्भालय के प्रधान पीठ पर श्रीरंगनाथ पेरुमाल् के साथ श्री आंडाल देवी, श्री गरुडाल्वार अंश माने पेरियाल्वार का दर्शन कर सकते हैं। नित्यपूजादि कार्यक्रम बडे वैभवपूर्ण ढंग से संपन्न होते हैं।

श्री आंडाल देवी का कल्याणोत्सव तमिल पंगुणी मास में (मार्च-अप्रैल) महोन्नत रूप से निर्वहण किए जाते हैं। आडि मास में (जुलाई-अगस्त) देवी माँ का तिरुनक्षत्र उत्सव आयोजित किए जाते हैं। मार्गली मास में (दिसंबर-जनवरी) तिरुउत्सव मनाए जाते हैं। मंदिर के बाहर पूजा सामग्री बेचने वाले दूकान भी है। इन दूकानों में श्री आंडाल माँ का प्रसाद ''पालकोवा'' बेचते हैं। यह सुप्रसिद्ध प्रसाद है।

पेरियाल्वार

पेरियाल्वार (विष्णुचित्त) का जन्मस्थान श्रीविल्लिपुत्तूर क्षेत्र है। श्री वटपत्रसायी मंदिर के पुजारी का पुत्र ही विष्णुचित्त है। ये ९वीं शताब्दी में क्रोधन संवत्सर में तमिल आनि (ज्येष्ठा) मास, स्वाति नक्षत्र, एकादशी, रविवार के दिन ''मुकुंदाचार्य-पद्मवल्लि'' नामक दंपति को पैदा हुए। श्रीवैष्णव, इनको 'गरुडाल्वार' का अंश मानकर अर्चना करते हैं। विष्णुचित्त अत्यंत भक्ति तत्पर भक्त था। इन्हीं को पेरियाल्वार नाम से भी समाज जानता है। विष्णुचित्त, अपने पिताजी के पास उप-परिचारक के रूप में रहकर श्री वटपत्रसायी मंदिर में मूलमूर्ति को सदा पूजादिक कार्यक्रम में मदद करते रहते थे। इनका विश्वास था कि श्रीकृष्ण परमात्मा ही इस जगत का मूलकारक है। इनके द्वारा बालगोपाल पर लिखी गई कविताएँ नूतन साहित्य सांप्रदाय का प्रथम सोपान हुआ।

एक बार विष्णुचित्त को पांड्य देश की सभा से निमंत्रण मिला। भगवानजी की आज्ञा मानकर विष्णुचित्त, मधुरै शहर

जाकर, पांड्य सभा में भगवत् तत्त्व की जानकारी देकर उस तत्त्व को स्थापित किया। इस विजय के सिलसिले में पांड्य राजा ने एक हाथी पर अंबारी को रखवाकर, विष्णुचित्त की निकलवायी। परम प्रिय भक्त के विजय को दिखाने के लिए साक्षात् श्रीहरि ही प्रत्यक्ष हुए। भगवानजी (श्रीमहाविष्णु) की आज्ञा पाकर विष्णुचित्त ने अपनी बेटी आंडाल को श्रीरंगक्षेत्र में स्थित श्रीरंगनाथ पेरुमाल् को सौंपकर विवाह करवाया। भगवानजी को दामाद के रूप में पाने का भाग्य पेरियाल्वार को ही मिला। पेरियाल्वार के तिरुनक्षत्र के संदर्भ में तिरुउत्सव संपन्न होते हैं। तेलुगु वाले तिरुउत्सव को आषाढ-शुक्ल नवमी-स्वाति नक्षत्र के समय आयोजित करते हैं।

आंडाल

श्रीविल्लिपुत्तूर क्षेत्र में स्थित श्री वटपत्रसायी देवालय में विष्णुचित्त परिचारक थे। मंदिर के बगल में ही सुन्दर उद्यान वन था। पूजा कैंकर्य के लिए एक दिन फूल तोड़ने के लिए बगीचे में गया। उसने बगीचे में तुलसी पौधे के पास एक छोटी-सी बच्ची को दिखा था। दैवी कृपा से ही यह बच्ची हमें मिली समझकर, विष्णुचित्त दंपति ने लाड प्यार से उसका पालन-पोषण किया। उसका नाम ''कोदै'' रखा। ''आंडाल'' और ''गोदादेवी'' भी इन्हीं के नाम हैं। उनके पिता के द्वारा अनुनित्य किए जानेवाले भागवत कथा प्रवचन के कारण आंडाल को श्रीकृष्ण भगवान पर परम भक्ति के साथ अनुरक्ति भाव भी बढ़ती गई। श्रीमन्नारायण से विवाह करने की इच्छा भी बढ़ गयी थी।

विष्णुचित्त, प्रतिदिन भगवान के अलंकरण के लिए प्रतिदिन फूल माला ले जाते थे। भगवान वटपत्रसायी के लिए गूँथी हुँई फूल माला को आंडाल अपनी गले में पहन कर बाद में ही प्रतिदिन पूजा के लिए देती रही। एक दिन गोदादेवी के व्यवहार को देखकर विष्णुचित्त ने आंडाल को डाँटा। उस दिन के रात विष्णुचित्त के स्वप्न में भगवान का दर्शन हुआ। भगवान ने ऐसा कहा - ''गोदादेवी से पहनी गई फूल माला ही मुझे प्रिय लगते है।'' उस दिन से लेकर गोदादेवी से धारण की गयी फूलमाला ही को श्री वटपत्रसायी स्वामी को समर्पित करना एक संप्रदाय बना। वह आज भी चालू है। इस कारण से ''शूडिकोडुत्त नाच्चियार'' नाम आया था।

एक रात को विष्णुचित्त के स्वप्न में श्रीरंगनाथ पेरुमाल् ने दर्शन देकर, आदेश दिया कि गोदादेवी साक्षात् भूदेवी का अंश है, उनके साथ मेरा विवाह श्रीरंगम् में संपन्न करो। भगवान के आदेश के अनुसार विष्णुचित्त गोदादेवी के साथ श्रीरंगम् पहुँच कर, पेरुमाल् की उत्सवमूर्ति के साथ गोदादेवी का विवाह करवाया।

गोदादेवी की रचना ''तिरुप्पावै'' विश्वविख्यात है। यह ३० पाशुरों का काव्य है। धनुर्मास में स्त्रियाँ ३० दिन अत्यंत भक्ति भाव से तिरुप्पावै का पारायण करते हैं। आंडाल का एक और काव्य का नाम ''नाच्चियार तिरुमोली'' है। आंडाल का जन्म नक्षत्र के अवसर पर उनके उत्सव मनाये जाते हैं। तेलुगु पंचांग के अनुसार श्रावण मास-शुद्ध चविति-पुब्बा नक्षत्र के दिन को तिरुनक्षत्र उत्सव संपन्न होता है।

चेन्नै एग्मोर - कन्याकुमारी रेल सर्वीस (वया) मधुरै, विरुधनगर जंक्शन, तिरुनल्वेली से होकर चलता है। मधुरै - तिरुनल्वेली रेल के मार्ग में विरुधनगर रेल जंक्शन स्थित है। विरुधनगर जिला का केंद्र है। विरुधनगर - तेन्काशी के बीच ब्रांची रेल मार्ग है। विरुधनगर के नैऋति दिशा की ओर ४२ कि.मी. की दूरी पर श्रीविल्लिपुत्तूर रेल्वे स्टेशन है। विरुधनगर से श्रीविल्लिपुत्तूर पहुँचने के लिए रेल या बस की सुविधा है।

मधुरै - कोल्लाम (केरला) के बीच में स्थित रेल मार्ग में विरुधनगर जंक्शन, श्रीविल्लिपुत्तूर, तेन्काशी जंक्शन आदि रेल्वे स्टेशन आते हैं। मधुरै से रेल व बस की सुविधा है। मधुरै से लगभग ६ कि.मी. की दूरी पर तिरुमंगलम् नामक एक प्रांत है। वहाँ पलंगनाथम् बस स्टाण्ड है। वहाँ से श्रीविल्लिपुत्तूर के लिए बस निकलते हैं। मधुरै में स्थित पेरियार बस स्टाण्ड से पलंगनाथम् बस स्टाण्ड को इंटर सिटी बस निरंतर चालू रहते हैं। इंटर सिटी बस (वया) मधुरै रेल्वे स्टेशन से होकर चलते है। मधुरै में पेरियार बस स्टाण्ड से श्रीविल्लिपुत्तूर के लिए बस बहुत कम है। मधुरै रेल सर्वीस वया विरुधनगर जंक्शन, तिरुत्तंगाल, शिवकाशी, श्रीविल्लिपुत्तूर, तेन्काशी जंक्शन के आगे है। श्रीविल्लिपुत्तूर रेल्वे स्टेशन से मंदिर तक जाने के लिए आटो/टैक्सी जैसी यातायात की सुविधा है। नजदीक प्रांतों से भी श्रीविल्लिपुत्तूर को पहुँचने केलिए बस की सुविधा है। बस स्टाण्ड के निकट ही मंदिर है। यात्रियों को ठहरने के लिए कमरे मिलती हैं।

दिसंबर महीने का राशिफल

- डॉ.केशव मिश्र

मोबाइल - ८३२८६९०८२३

मेषराशि - मासारम्भ में कुछ विघ्न हो सकती है कार्यों में। मासान्त शुभ रहेगा। भरपुर प्रयास में लगे रहे फल प्राप्त होंगे।

वृषभराशि - आर्थिक मामलों में सोच समझकर निर्णय लें। संघर्ष के बाद कार्यों में सफलता प्राप्त होगी। स्थानान्तरण होने की सम्भावना है। कोर्ट कचहरी से दूर रहे, परेशानी में पड़ सकते हैं।

मिथुनराशि - लम्बे समय से चली आ रही परेशानियों का हल निकलेगा। बाल-बच्चों की उन्नति होगी। सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी। घर-परिवार का वातावरण सुखमय रहेगा। व्यापार में लाभ होगा।

कर्कराशि - स्वास्थ्य ठीक, पद-प्रतिष्ठा बढ़े, रूके कार्य बनेंगे, काम कारोबार में उन्नति होगी। पारिवारिक सुख शान्ति बनाये रखे। प्रेम प्रसंग में स्थायित्व बना रहेगा।

सिंहराशि - भूमि-वाहन-मकान का सुख मिल सकता है। किसी पर अधिक विश्वास करना आपको कुछ समय के बाद समस्या में डाल सकता है। प्रेम सम्बन्ध में मतभेद बन सकते हैं।

कन्याराशि - भूमि-मकान के कार्यों में बाधायें आयेगी। वैवाहिक जीवन में पति-पत्नी के मध्य वैचारिक मतभेद बने रहेंगे। व्यापार में कम लाभ तथा नौकरी में स्थान परिवर्तन हो सकता है।

तुलाराशि - लम्बी दूरी की यात्रा होने की सम्भावना है। आर्थिक उन्नति की सम्भावना बनेगी। आय के स्त्रोतों में वृद्धि होगी। शत्रु पक्ष प्रबल है।

वृश्चिकराशि - कोई पुरानी मनोकामना पूर्ण होगी। नौकरी-भूमि-मकान के क्रय विक्रय के लिये स्थिति शुभ रहेगी। घर-परिवार में खुशी का माहौल रहेगा। अदालत के मामले में विजय हो सकती है।

धनुराशि - किसी पर अचानक विश्वास करना नुकसानदायक हो सकता है। पारिवारिक कार्यों में हस्तक्षेप करना उचित नहीं है। अधिक पूँजी निवेश न करें। भाग्य कुछ कम साथ देगा।

मकरराशि - यह माह कष्टदायक रहेंगे। कार्य में अड़चने आयेंगी। सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी। व्यापार में उतार-चढ़ाव रहेगा। परिवार में सामान्य परेशानी हो सकती है।

कुम्भराशि - पूर्व में किये गये प्रयासो में सफलता मिलेगी। आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बनाने के लिये अधिक परिश्रम करना पड़ेगा। विद्यार्थियों के लिये अच्छा रहेगा।

मीनराशि - विरोधियों से सावधान, शत्रु पक्ष प्रबल। भूमि-मकान के कार्यों में बाधायें आयेगी। माता-पिता की सलाह उपयोगी हो सकती है। घरेलू खर्च बढ़ सकते हैं। किसी प्रकार के वाद-विवाद से बचना चाहिए।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

सप्तगिरि

(आध्यात्मिक मासिक पत्रिका)

चंदा भरने का पत्र

१. नाम : ....
(अलग-अलग अक्षरों में स्पष्ट लिखें) ....
....
पिनकोड ....
मोबाइल नं ....

२. वांछित भाषा : ☐ हिन्दी ☐ तमिल ☐ कन्नडा ☐ तेलुगु ☐ अंग्रेजी ☐ संस्कृत

३. वार्षिक / जीवन चंदा :

४. चंदा का पुनरुद्धरण :

(अ) चंदा की संख्या :

(आ) भाषा :

५. पेय रकम :

६. पेय रकम का विवरण :

नकद (एम.आर.टि. नं) दिनांक :

धनादेश (कूपन नं) : दिनांक :

मांगड्राफ्ट संख्या : दिनांक :

प्रांत :

दिनांकः चंदा भरनेवाला का हस्ताक्षर

- वार्षिक चंदा : रु.६०.००, जीवन चंदा : रु.५००-००
- नूतन चंदादार या चंदा का पुनरुद्धार करनेवाले इस पत्र का उपयोग करें।
- इस कूपन को काटकर, पूरे विवरण के साथ इस पते पर भेजें–
- संस्कृत में जीवन चंदा नही है, वार्षिक चंदा रु.६०-०० मात्र है।

प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, के.टी.रोड,
तिरुपति-५१७ ५०७. (आं.प्र)

नूतन फोन नंबरों की सूचना

चंदादारों और एजेंटों को सूचित किया जाता है कि हमारे कार्यालय का दूरभाष नंबर बदल चुका है और आप नीचे दिये गये नंबरों से संपर्क करें–

कॉल सेंटर नंबर
0877 - 2233333

चंदा भरने की पूछताछ
0877 - 2277777

अर्जित सेवाएँ और आवास के अग्रिम आरक्षण के लिए कृपया इस नंबर से संपर्क करें–

STD Code:
0877

दूरभाष :

कॉल सेंटर नंबर :
2233333, 2277777.

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

भक्तों की सेवा में...

दुनियाभर में श्रीनिवास कल्याणोत्सव

सिंगापूर

दि. १२-१०-२०१९ को सिंगापूर में मनाये गए श्रीनिवास कल्याणोत्सव में ति.ति.दे. के न्यास मंडली के अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी जी ने पत्नी-सहित भाग लिया। इस संदर्भ में उन्होंने बताया था कि श्रीनिवास कल्याणोत्सव संसार भर में मनाने से लोगों में श्री वेंकटेश्वर भक्ति तत्त्व की आदत को बढ़ाने का अवकाश मिलता है।

मेलबोर्न

ति.ति.दे. न्यास मंडली के अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी ने ९-११-२०१९ को मेलबोर्न में आयोजित किए गए श्रीनिवास कल्याणोत्सव में मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित हुए। इस संदर्भ में उन्होंने बताया है कि कलियुग के दैव श्रीनिवास के आशीर्वाद ही लोगों के लिए श्रीराम की रक्षा है। साथ-साथ बताया है कि देश को छोडकर आने पर भी हमारी संस्कृति एवं संप्रदायों को सजीव रूप में रखना प्रशंसनीय है। ऐसी आध्यात्मिक भावना रूपी संपत्ति को आनेवाली पीढ़ियों को देने की बात पर अपनी इच्छा प्रकट की। प्रबल पाश्चात्य संस्कृति के विरुद्ध में तेलुगु भावना को अपने प्रांत में प्रसार करनेवाले मेलबोर्न में स्थित तेलुगु प्रांत के लोगों की प्रशंसा की। तिरुमल तिरुपति देवस्थान में होनेवाले संस्करण बताए गए।

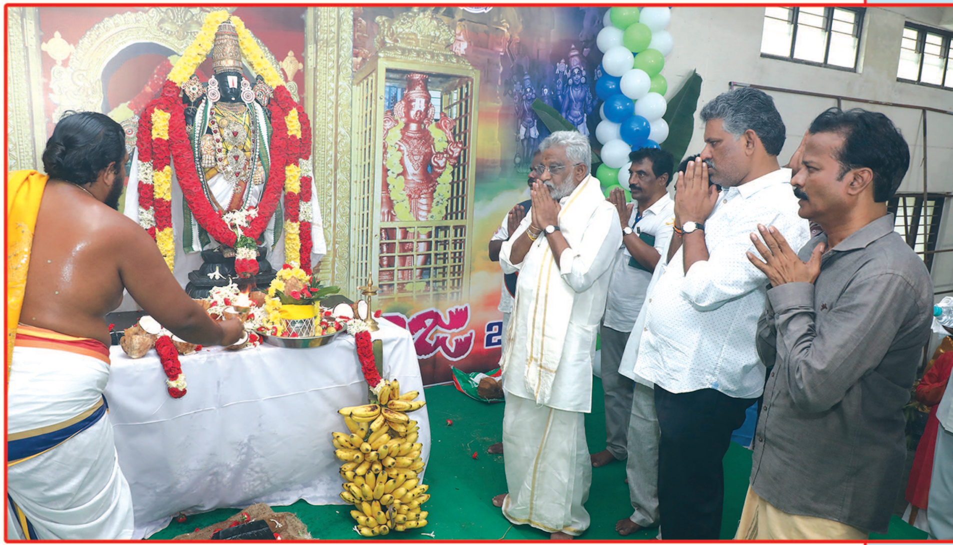

ति.ति.दे. परिवहन विभाग में आयुध पूजा

दि. २४.१०.२०१९ को तिरुपति में स्थित ति.ति.दे. परिवहन विभाग में दशहरे पर्व के अंतर्गत आयुध पूजा को वैभवपूर्ण संपन्न किया। इस पूजा महोत्सव कार्यक्रम में ति.ति.दे न्यासमंडली के अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित हुए। इस संदर्भ में उन्होंने बताया था कि दशहरे के पर्वदिनों में ति.ति.दे. परिवहन विभाग में आयुध पूजा मनाना कई सालों से आनेवाली परंपरा है। भक्तों को विशेष रूप से सेवाएँ दी जा रहे ति.ति.दे. परिवहन विभाग के अधिकारीगण, कर्मचारी एवं चालकों को इस अवसर पर शुभकामनाएँ बतायी गयीं।

Edited and Published on behalf of T.T.Devasthanams by **Dr.K.Radha Ramana,** M.A., M.Phil, Ph.D., **Chief Editor,** T.T.D. and Printed at T.T.D. Press by **Sri R.V.Vijaykumar,** B.A., B.Ed., **Dy.E.O.,** (Publications & Press), T.T.D. Press, Tirupati-517 507.

लोककल्याणार्थ.....

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

श्रीनिवासमंगापुरम्, श्री कल्याण वेंकटेश्वरस्वामीजी के मंदिर में
१६-१०-२०१९ से १८-१०-२०१९ तक संपन्न
अष्टोत्तर शतकुंडात्मक श्रीनिवास महायाग महोत्सवों के दृश्य

SAPTHAGIRI (HINDI) ILLUSTRATED MONTHLY Published by Tirumala Tirupati Devasthanams
printing on 25-11-2019. Regd. with the Registrar of Newspapers under "RNI" No.10742, Postal Regd.No.TRP/11 - 2018-2020
Licensed to post without prepayment No.PMGK/RNP/WPP-04/2018-2020